

कोष (रिजर्व फंड) में जमा करने के उपरांत सदस्यों में बाँटा जा सकता है । इसके लिये रजिस्ट्रार की अनुमति लेनी पड़ती है । यह प्रतिबन्ध इस कारण लगाया गया है कि कहा सदस्यों का उद्देश्य वसूल अधिकाधिक लाभ प्राप्त करना ही न हो जावे । अपरिमित दायित्व वाली समितियों में लाभ प्रांतीय सरकार की आज्ञा से ही बाँटा जा सकता है । प्रांतीय सरकार साधारण अनुमति भी दे सकती है । प्रत्येक प्रांत ने यह नियम बना दिया है कि प्रत्येक समिति जिसके व्यापार में लाभ होता है, लाभ का कुछ अंश रक्षित कोष में रखेगी । रक्षित कोष, समिति के भंग हो जाने पर भी, सदस्यों में बाँटा नहीं जा सकता ।

रक्षित कोष या तो समिति के व्यापार में लगाया जाता है, या रजिस्ट्रार के पास रहता है अथवा रजिस्ट्रार की आज्ञा से आरंभ कहा जमा कर दिया जाता है । समिति के भंग हो जाने पर, उसका श्रेष्ठ को चुका कर जो क्षया रहे, उसका उपयोग समिति के निष्पत्ति के अनुसार होगा । यदि समिति इसका निष्पत्ति न कर सके तो रजिस्ट्रार जिस प्रकार उस धन का उपयोग करना चाहे कर सकता है । कुछ प्रांतों में यह नियम है कि यदि समिति किसी अथवा सहकारी संस्था को सदस्य होता रक्षित कोष का बचा हुआ रूपया उसको दे दिया जावे ।

प्रत्येक समिति, चौथाई लाभ रक्षित कोष में रखने के उपरान्त लाभ का १० प्रतिशत दान तथा आगे लिये सावजनिक कार्यों में व्यय कर सकती है — निर्धनों को सहायता, सार्वजनिक शिक्षा (गावों तथा उन स्थानों में जहाँ समितियाँ हैं), औपनि मुफ्त बैठवाने का प्रयत्न, आदि । कोरी धार्मिक पूजा अथवा धार्मिक शिक्षा में वह रूपया व्यय नहीं किया जा सकता । (धारा १४) ।

यदि जिलाधीश जाय के लिये प्राथना करे, पचासत प्राथनात्र मेमबर जाय करवाना चाहे, अथवा समिति के एक तिहाई सदस्य

जांच करवाना चाहें तो रजिस्ट्रार को स्वयं या अपने किसी अधीन कर्मचारी से जांच करवाना होगी। जैसे रजिस्ट्रार को अधिकार है कि वह जब चाहे समिति की जांच कर सकता है। (धारा ३५)।

समिति के किसी भी लेनदार को यह अधिकार है कि वह समिति के हिसाब की, रजिस्ट्रार अथवा उसके द्वारा नियुक्त किसी कर्मचारी से, जांच करवावे। किन्तु लेनदार को जांच करने का व्यय देना होगा और उतना रुपया उसको पहिल जमा करना पड़ेगा। (धारा ३६)

निम्नलिखित दशाओं में समिति भग हो जाती है — (१) यदि किसी लेनदार की प्रायना पर रजिस्ट्रार ने जांच करवाई हो और उससे यह प्रतीत हो कि समिति को भग कर देना चाहिए, तो वह भग कर सकता है। (२) यदि समिति के तीन चौथाई सदस्य समिति को भग कर देने की प्रायना करें तो रजिस्ट्रार समिति को भग कर सकता है। भग करने की आशा के विरुद्ध कोई भी सदस्य प्रांतीय सरकार से प्रायना कर सकता है। किन्तु भग होने के दो मास के उपरान्त अपील नहीं सुनी जाती (धारा ३६)। (३) यदि समिति के सदस्यों की संख्या १० से कम हो जावे तो समिति स्वतः ही भग हो जाती है। (धारा ४०)

जब समिति भग हो जाती है, तब रजिस्ट्रार एक 'लिक्विडेटर' नियुक्त करता है, जो उसका शेष काय करता है। लिक्विडेटर का यह कर्त्तव्य होता है कि वह समिति की सम्पत्ति तथा देना का हिसाब बनावे, जिन लोगों पर समिति का रुपया बाकी है, उनसे वसूल करे, जिनकी समिति श्रृंखली है, उनका श्रृंखल चुकावे, तथा सदस्यों के दायित्व का निश्चय करे, और उनसे रुपया वसूल करे। (धारा ४१ और ४२)

प्रांतीय सरकारों को यह अधिकार है कि वे सहकारी समितियों तथा उनके सदस्यों के भ्रमों को निपटान के लिये कुछ नियम बना दें। सभा प्रा तो न इसक वास्ते नियम बना लिये हैं। सहकारी समितियों

कोष (रिजर्व फंड) में जमा करने के उपरांत सदस्यों में बाँटा जा सकता है । इसके लिये रजिस्ट्रार की अनुमति लेनी पड़ती है । यह प्रावधान इस कारण लगाया गया है कि कहीं सदस्यों का उद्देश्य केवल अधिकाधिक लाभ प्राप्त करना ही न हो जावे । अपरिमित दायित्व वाले समितियों में लाभ प्रांतीय सरकार की आज्ञा से ही बाँटा जा सकता है । प्रांतीय सरकार साधारण अनुमति भी दे सकती है । प्रत्येक प्रान्त ने यह नियम बना दिया है कि प्रत्येक समिति जिस प्रकार व्यापार में लाभ होता है, लाभ का कुछ अंश रक्षित कोष में रखेगी । रक्षित कोष, समिति के भग हो जान पर भा, सदस्यों में बाँटा नहीं जा सकता ।

रक्षित कोष या तो समिति के व्यापार में लगाया जाता है, या रजिस्ट्रार के पास रहता है अथवा रजिस्ट्रार की आज्ञा से आर कहीं जमा कर दिया जाता है । समिति के भग हो जान पर, उसका श्रृण को चुका कर जो रुपया बचे उसका उपयोग समिति के निर्णय के अनुसार होगा । यदि समिति इसका नियम न कर सके तो रजिस्ट्रार जिस प्रकार उस धन का उपयोग करना चाहे कर सकता है । कुछ प्रांतों में यह नियम है कि यदि समिति किसी अथ सहकारी संस्था की सदस्य होती रक्षित कोष का बचा हुआ रुपया उसको दे दिया जावे ।

प्रत्येक समिति, चौपाई लाभ रक्षित कोष में रखने के उपरांत, लाभ का १० प्रति शत दान तथा आगे लिये सावजनिक कार्यों में व्यय कर सकती है —निर्धनों का सहायता, सार्वजनिक शिक्षा (गांधी तथा उन स्थानों में जहाँ समितियाँ हैं), औषधि मुफ्त बँटवाने का प्रबंध, आदि । कोरी धार्मिक पूजा अथवा धार्मिक शिक्षा में यह रुपया व्यय नहीं किया जा सकता । (धारा ३४) ।

यदि जिलाधीश जाच के लिये प्राथना करे, पचासत प्राथनावत्र भेजकर जाच करवाना चाहे, अथवा समिति के एक-तिहाई सदस्य

जांच करवाना चाहें तो रजिस्ट्रार को स्वयं या अपने किसी अधिकारी से जांच करवाना होगा। जैसे रजिस्ट्रार को अधिकार है कि वह जांच चाहे समिति की जांच कर सकता है। (धारा ३५)।

समिति व किसी भी लेनदार को यह अधिकार है कि वह समिति के दिवाब की, रजिस्ट्रार अथवा उसका द्वारा नियुक्त किसी कर्मचारी से, जांच करावे। किन्तु लेनदार को जांच करने का व्यय देना होगा और उतना रुपया उसको पहिल जमा करना पड़ेगा। (धारा ३६)

निम्नलिखित दशाओं में समिति भग हो जाती है — (१) यदि किसी लेनदार की प्रार्थना पर रजिस्ट्रार ने जांच करवाई हो और उससे यह प्रतीत हो कि समिति का भग कर देना चाहिए, तो वह भग कर सकता है। (२) यदि समिति के तीन चौथाई सदस्य समिति को भग कर देने की प्रार्थना करें तो रजिस्ट्रार समिति को भग कर सकता है। भग करने की आशा क विरुद्ध कोई भी सदस्य प्रांतीय सरकार से प्रार्थना कर सकता है। किन्तु भग होने के दो मास के उपरान्त अपील नहीं हुनी जाती (धारा ३८)। (३) यदि समिति के सदस्यों की संख्या १० से कम हो जावे तो समिति स्वतः ही भग हो जाती है। (धारा ४०)

जब समिति भग हो जाती है, तब रजिस्ट्रार एक 'लिक्वीडेटर' नियुक्त करता है, जो उसका शेष कार्य करता है। लिक्वीडेटर का यह कर्तव्य होता है कि वह समिति की सम्पत्ति तथा देना का दिवाब बनावे, जिन लोगों पर समिति का रुपया बाकी है, उनसे वसूल करे जिनकी समिति श्रुती है, उनका श्रुत चुकावे, तथा सदस्यों के दावित्व का निश्चय करे, और उनसे रुपया वसूल करे। (धारा ४१ और ४२)

प्रांतीय सरकारों को यह अधिकार है कि वे सहकारी समितियों तथा उनके सदस्यों के भगड़ों को नियन्त्रण व निये कुछ नियम बना दें। सभी प्रांती ने इसका वास्ते नियम बना लिये हैं। सहकारी समितियों

के लिये यह नियम अत्यन्त आवश्यक है । इन समितियों का उद्देश्य निघन मनुष्यों की आर्थिक अवस्था का सुधार करना, उनमें स्वावलम्बन का भाव जागृत करना, तथा उन्हें मितव्ययिता का पाठ पढ़ाना है । यह उद्देश्य तब तक पूरा नहीं हो सकता, जब तक ये लोग मुकदमेवाजी में व्यय करते रहें ।

निम्नलिखित भगड़ों का निपटारा रजिस्ट्रार स्वयं कर सकता है, या वह इनके लिए एक या तीन पंच नियुक्त कर सकता है — (१) जिनसे समिति के व्यापार का सम्बन्ध है । (२) जिनमें सदस्यों का आपस में किसी बात पर झगड़ा हो, मूलपूर्व सदस्यों में कोई झगड़ा हो, अथवा समिति के पंचों में कोई झगड़ा हो । अथ भगड़ों के लिये साधारण अदालतों में जाना होगा ।

प्रत्येक पेसी के लिए दोनों पक्ष को उचित नोटिस दिया जाता है । रजिस्ट्रार अथवा पंचों को शपथ जिलाने, वादी प्रतिवादी और गवाहों को उपस्थित होने के लिये आशा देन, तथा कागजों को मगवाने का अधिकार है । यदि एक पक्ष उपस्थित हो तो भी फैसला किया जा सकता है । गवाही के लिये गवाह के उपस्थित न होने पर उसके विरुद्ध कायवाही की जा सकती है । रजिस्ट्रार तथा पंच ऐवोडे म एक्ट (गवाही कानून) के नियमों को मानने के लिये बाध्य नहीं हैं ।

यद्यपि रजिस्ट्रार तथा पंचों पर कानूनी बंधन लागू नहीं है, उन्हें यह प्रयत्न करना चाहिये कि वे दोनों पक्षों की बात एक दूसरे के सामने भली भाँति सुनें । यदि झगड़े के विषय में निजी तौर से शांत हुआ हो तो उसका विचार न करें । रजिस्ट्रार को तथा पंचों को यह अधिकार है कि वेवल कानून की ही नहीं वस्तुस्थिति को भी देखें । फैसला लिखित होना चाहिये, उसपर स्टाम्प नहीं होता । वकीलों का इन मुकदमों में आशा मिशन पर ही, आना हो सकता है । बम्बई में वकील, इन मुकदमों में, किसी दशा में भी नहीं आ सकते ।

यदि रजिस्ट्रार ने कोई पंच नियुक्त किया हो तो पंच के फैसले के विरुद्ध, रजिस्ट्रार से अपील की जा सकती है। रजिस्ट्रार के फैसले के विरुद्ध अपील नहीं होती, हाँ, बम्बई में अंग्रेज प्रान्तीय सरकार में हो सकती है। रजिस्ट्रार के फैसले ठीक उसी तरह लागू होते हैं, जिस तरह कि अदालत के। (धारा ४३) रजिस्ट्रार की आशा के विरुद्ध दो अवस्थाओं में प्रान्तीय सरकार में अपील की जा सकती है (१) जब वह किसी समिति की रजिस्ट्रार करने में इनकार करे, (२) जब वह किसी समिति को भग कर दे। अपील आशामेदोमदान तक हो सकता है।

भारतवर्ष में सहकारिता आन्दोलन का प्रसार—आगे दिए हुए आँकों से समस्त भारतवर्ष में की मध्य प्रकार की सहकारी समितियों की स्थितिका अनुमान किया जा सकता है। सन् १९१० से १९१५ तक पांच वर्ष के औसत आंक इस प्रकार थे—समितियाँ १२ हजार, उनके सदस्य साठे पाँच लाख, और उनकी कार्यशालाएँ जो साठे पाँच करोड़ रुपये। सम्पादक घारे घारे बढ़ती गयीं। सन् १९३० से १९३५ के औसत आंक क्रमशः १०६ हजार, ४३ लाख, और ६५ करोड़ में। सन् १९३६-४० में समितियाँ १,७ हजार, उनका सदस्य ६१ लाख, और कार्यशालाएँ जो १०७ करोड़ रुपये थी।

आन्दोलन का सिंहावलोकन—सहकारिता आन्दोलन को यहाँ स्थापित हुए ४४ वर्ष हो गए। इसके जन्म अर्थात् १९०४ में १९१५ तक इसका 'प्रारम्भिक प्रयास और आयोजन काल' था। सन् १९१५ में आन्दोलन की जाँच के लिए मेकलेगन कमेटी बैठाई गयी। उसकी निवारिशों का आन्दोलन पर बहुत प्रभाव पड़ा। १९१६ में सहकारिता इस्तेमालित विषय हो गया और संजियो ने उसको प्रोत्साहन दिया। अस्तु १९१५ से १९२६ तक का काल सहकारिता आन्दोलन को ठपट और शीघ्र गति से फैलाने का समय है। आन्दोलन प्रत्येक प्रान्त में तेजी से बढ़ा। इसको हम योजना राहत प्रसार का काल

कह सकते हैं। इसके उपरान्त अर्थात् १९१६—३० के बाद भारतवर्ष में ख़ोर आर्थिक मंदी प्रगट हुई, खेती की पैदावार का मूल्य बेहद गिर गया। कल यह हुआ कि भूमि का मूल्य भी घट गया। इस आर्थिकमंदी के परिणाम स्वरूप समस्त देश में सहकारिता आन्दोलन को गहरा धक्का लगा। सभी प्रान्तों में आन्दोलन के पुनर्निर्माण और सुधार के प्रयत्न आरम्भ हुए। इस काल को हम 'अवनति और पुनर्निर्माण का काल' कह सकते हैं। १९३६ के उपरान्त कुछ सुधार हुआ। परन्तु कुछ प्रांतों (बंगाल, बिहार, उड़ीसा और बरार) में आन्दोलन की स्थिति इतनी खराब हो गयी थी कि वह खेती की पैदावार के मूल्य में वृद्धि होने पर भी नहीं सुधरा। कार्यकर्त्ताओं ने प्रांतीय सरकारों की सहायता से आंदोलन को बचाने का प्रयत्न किया।

१९४० से सहकारिता आन्दोलन पर युद्ध का प्रभाव पड़ने लगा। युद्ध के लिये आवश्यक वस्तुएँ तैयार कराने तथा उन्हें सरकार के हाथ बेचने के उद्देश्य से सभी प्रांतों में यह उद्योग बंधों का संगठित किया गया, दैनिक आवश्यकता की वस्तुओं का मूल्य अत्यधिक बढ़ जाने और उनके मिलने में कठिनाई होने से देश में उपभोक्ता-स्टोरी की एक बाढ़ सी आ गई। अथ सहकारी समितियों की और कार्यकर्त्ताओं का ध्यान ही नहीं रहा। अब युद्ध समाप्त हो गया है। सहकारिता आन्दोलन में फिर नवीन परिवर्तन होगा। सम्भव है, युद्ध अनित यह उद्योग बंधे और स्टोर लुप्त हो जायें। फिर भी देश के आर्थिक निर्माण में सहकारिता आन्दोलन का विशेष भाग रहेगा, इसमें संदेह नहीं।

मल्टी-यूनिट कोऑपरेटिव सोसायटीज एक्ट १९४२— २ मार्च १९४२ को भारत सरकार ने सहकारी समितियों के सम्बन्ध में एक एक्ट पास किया है, जिसका सम्बन्ध उन सहकारी समितियों से है, जिनका कार्यक्षेत्र जिस प्रान्त में वे रजिस्टर की गई हैं, उनमें बाहर भी

है, जैसे सहकारी बीमा समिति, रेल अथवा तार विभाग के कर्मचारियों के लिए स्थापित सहकारी समित्त, कोई अन्य समिति जिसके सदस्य प्रांतों में भी हों, अथवा जिसकी साखा दूसरे प्रांतों में हो।

सहकारी समितियों प्रांतीय विषय है। परन्तु यदि कोई सहकारी समिति अपने प्रांत की सीमा के बाहर भी काम करे तो वह 'कारपोरेशन' मानी जावेगी। कारपोरेशन केन्द्रीय विषय है। १९४२ के एक्ट की मुख्य धारा इस प्रकार है — यदि कोई सहकारी समिति जिसके सम्बन्ध में यह एक्ट लागू होता है, किसी प्रांत में रजिस्टर हो चुकी है और उसका कार्यक्षेत्र किसी दूसरे प्रांत में भी है तो वह उस प्रांत में भी रजिस्टर समझी जावेगी और उसके सम्बन्ध में वे ही सारे नियम (रजिस्ट्रेशन, निरीक्षण और दिवालिया होने के) लागू होंगे, जो उस प्रांत में प्रचलित हैं, जहां कि वह समिति रजिस्टर हुई है। जो समिति इस एक्ट के बनने के बाद रजिस्टर हो, उनके सम्बन्ध में भी जिस प्रांत में रजिस्टर होगी उस प्रांत के ही सारे नियम लागू होंगे। लेकिन वह जिन दूसरे प्रांतों में कार्य करेगी, वहां भी रजिस्टर समझी जावेगी। इस एक्ट के अनुसार केन्द्रीय सरकार इस प्रकार की समितियों का एक केन्द्रीय रजिस्ट्रार नियुक्त कर सकती है। उसकी नियुक्ति होने पर इन समितियों का रजिस्ट्रेशन, नियंत्रण इत्यादि सब उसके अधिकार में होगा, प्रांतीय रजिस्ट्रारों को इन समितियों से कोई वास्ता न होगा।

पाँचवाँ परिच्छेद कृषि सहकारी साख समितियाँ

—०—

पहले कहा जा चुका है कि भारतीय कृषक की निर्धनता, उसका अशिक्षित होना, तथा महाजन का मयकर भ्रूण उसको महाजन का कौत दास बना देता है। इसीलिए भारत सरकार ने सहकारी साख समितियों की स्थापना करवाई। इन समितियों के सदस्य वे हो सकते हैं, जो खेतीबारी में लगे हो तथा एक हा गाव में रहते हो। प्रत्येक गाव में निवासी एक दूसरे का आर्थिक स्थिति से भली भाँति परिचित होते हैं तथा एक दूसरे के चरित्र के विषय में भी जानकारी रखते हैं। रैफ़ीसन सहकारी साख समितियाँ अपरिमित दायित्व वाली होती हैं, इसलिए यह निता त आवश्यक है कि सदस्य एक दूसरे के चरित्र तथा आर्थिक स्थिति से भली भाँति परिचित हो। अपरिमित दायित्व के सिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक सदस्य समिति के ऋण का सामूहिक रूप से चुकाने के लिये बाध्य है। सहकारी साख समिति का प्रत्येक सदस्य दूसरे सदस्य के कार्यों का उत्तरदायी बन जाता है। यही कारण है कि नवीन सदस्य सभी समिति में लिया जा सकता है, जब दूसरे सब सदस्य उसको सदस्य बनाने के पक्ष में हो।

एक गाँव में एक ही समिति—प्रायः एक गाँव में एक ही साख समिति स्थापित की जाती है। यदि गाव बहुत बड़ा हो, जिसके कारण एक समिति सब वर्गों के लिए उपयोगी न हो सके, तो भिन्न भिन्न जातियों, तथा भिन्न भिन्न धर्मावलम्बियों का पृथक् पृथक् समितियाँ स्थापित की जा सकती हैं। किंतु सहकारिता आन्दोलन में काय करन

वाले सरकारी तथा गैर सरकारी कायकर्त्ता इस प्रकार की समितियों की प्रोत्साहन नहीं देने। सेन्ट्रल बैंकिंग इनकायरी कमेटी की सम्प्रति में किसी जाति, पेशे, तथा घमावलम्बियों की अलग साख समितियाँ स्थापित करना उचित नहीं है। गाव में जितन भी मनुष्य हों, उन सब की एक ही समिति होना आवश्यक है। ऐसी साख समिति गाव के प्रत्येक मनुष्य को एक आर्थिक सूत्र में बाँध कर उनमें प्रेम भाव उत्पन्न करती है।

प्रबन्धकारिणी सभा के कार्य—समिति का प्रबंध करने का अधिकार साधारण सभा तथा प्रबन्धकारिणी सभा अध्यापक पंचायत की होता है। साधारण सभा सब महत्वपूर्ण प्रश्नों पर अपना स्पष्ट मत देती है, और पंचायत साधारण सभा की आज्ञाओं का पालन करती है। असल में साधारण सभा केवल नीति निर्धारण करती है, और पंचायत सब कार्य करती है, ये कार्य निम्नलिखित हैं —

(१) वह सदस्यों को हिस्से देती है तथा उनको समिति का सदस्य बनाती है।

(२) वह गाव से डिवाजिट लेने का प्रयत्न करती है, तथा सेन्ट्रल बैंक से ऋण लाने का प्रबंध करती है। उसका सब से महत्वपूर्ण कार्य यह है कि वह सदस्यों में मितव्ययिता का प्रचार करे, और उन्हें तथा अन्य ग्रामनिवासियों को समिति में रुक्का अमा करने के लिये प्रोत्साहित करे।

(३) जब आवश्यकता हो, वह साधारण सभा का आयोजन करती है।

(४) वह यह निश्चय करती है कि किन सदस्यों को कितने समय के लिए रुक्का उधार दिया जावे। गाव ही वह उस अवधि के अन्त में ऋण के रुपये को वसूल करती है।

(५) वह समिति के आय-व्यय का हिसाब रखती है।

(६) वह समिति सम्बन्धी कार्यों की रजिस्ट्रार से लिखापट्टी करती है ।

• (७) वह उन सदस्यों के लिए, जो सम्मिलित रूप से आवश्यक वस्तुओं को खरीदना चाहते हैं तथा खेत की पैदावार को बेचना चाहते हैं, दलाल का काम करता है ।

(८) वह सरपंच तथा मंत्री का निर्वाचन करती है । तत्पश्चात् समिति के सारे कार्य की देखभाल रखता है तथा मन्त्री समित्त का दिसाव रखता है ।

(९) वह प्रवेश फीस, हिस्सों का मूल्य, डिवाइजिट, तथा ऋण व द्वारा कार्यशील पूँजी उगाहती है । समिति का रक्षित कोष भी समिति की कार्यशील पूँजी को बढ़ाता है । प्रवेश-फीस नाममात्र की होती है और उस प्रारम्भिक व्यय के लिए ली जाती है, जो समिति की स्थापना के समय करना पड़ता है ।

हिस्से वाली और गैर हिस्से वाली समितियाँ — कुछ प्रांतों में सदस्यों को हिस्से खरीदने पड़ते हैं और कुछ प्रांतों में हिस्से नहीं होते । पंजाब, संयुक्तप्रांत तथा मद्रास में समितियाँ हिस्से वाली होती हैं । अन्य प्रांतों में हिस्सेवाली और गैर हिस्सेवाली, दोनों ही तरह की समितियाँ हैं । भारतवर्ष में सहकारी सार्व समितियाँ कैसी होनी चाहियें, यह विचारणीय विषय है । कुछ विद्वानों का मत है कि समितियाँ हिस्से वाली होनी चाहिये क्योंकि हिस्से को बेचकर थोड़ी कार्यशील पूँजा इकट्ठी कर ली जाती है । समिति अपनी पूँजी सदस्यों को ऋण स्वरूप देकर उस पर लाभ उठाती है और अप्रत्यक्ष रूप से रक्षित कोष की वृद्धि होती है । सदस्य समिति के कार्यों में विरोध चाव से भाग लेने लुगते हैं, क्योंकि वे उसे अपनी वस्तु समर्पित हैं । यह सब ठीक है, कि वृ भारतवर्ष में गाँवों में रहने वाले इतने निधन हैं कि किसी प्रकार भी हिस्से का मूल्य नहीं चुका सकते । ऐसी अवस्था में

यदि हिस्से वालों समितियाँ स्थापित की जावें तो वे इमानदार तथा परिश्रमा किमान जा निबन दें, सदस्य नहीं बन सकते। लम्बक व बिचार म गैर हिस्सेवालों समितियाँ हैं। उपयुक्त है। सदस्यों का सहकारिता के सिद्धांतों की मनी माति सिद्धांतों का आव ता वे समिति व काय में अधिक भाग लेन लगेले और उनमें मित्रव्यवस्था व भाव आगुन हो सकेंगे। (क) को सदस्य बनात समय यह भी बतलाया जाना चाहिये कि साल समितित ववल श्रृणु दन व ही लिये नहीं है, सदस्यों को उसमें रुपया भी जमा करना चाहिये।

द्विपाजित—साल समिति का कोई सदस्य एक निश्चित क्रम से अधिक व हिस्से नहीं खरीद सकता। प्रत्येक सदस्य का ववल एक 'वाट' दन का अधिकार होता है। प्रवश-नास तथा हिस्सों व मूल्य में समितित व पास नाममात्र का पूँजी एकट्ठा होता है। इसलिए समितियाँ अधिकतर श्रृणु और द्विपाजित व द्वारा बनना काम चलाया करती हैं। कोई समिति जितना अधिक द्विपाजित आकर्षित करे, उतनीही उसकी सदस्यता समझनी चाहिये क्योंकि द्विपाजित सभी आसक जमा होगी, जब मनता का समिति का मरोना होगा, और उसकी आर्थिक स्थिति में बिम्बान होगा। अब तक साल समितियाँ द्विपाजित आकर्षित करके अपनी आकर्षकता के अनुसार पूँजी जमा नहीं कर सकती, उनको निबल ही समझना चाहिये। जमा करने से प्रामीण बनता तथा सदस्यों में मित्रव्यवस्था का भाव आगुन होता है।

भारतवर्ष में अभी तक बम्बई प्रांत को छोड़ और किसी प्रांत में समितियाँ द्विपाजित आकर्षित नहीं कर पाई हैं। साल समितियाँ गैर सदस्यों से भी द्विपाजित लेती हैं, किन्तु मेट्रन वैटुन इनकापरी कमेटी का यह मन है कि सहकारी साल समितियों को अधिक सद देकर द्विपाजित आकर्षित न करना चाहिये, क्योंकि यदि समितियाँ द्विपाजित पर अधिक सद देंगी तो गाँवों में सद को दर नहीं

घट सकेगी, जिसकी अत्यंत आवश्यकता है। जब तक से टून बंक सुसंगठित न हो और जब तक वे समितियों की आवश्यकता से अधिक पूँजी का उचित उपयोग करने के योग्य न हो जावें तथा आवश्यकता पड़ने पर समितियों को शीघ्र ही पूँजी देने की योग्यता प्राप्त न कर लें, तब तक गोर सदस्यों से डिपॉजिट लेना जोखिम का काम है, क्योंकि तनिक भी रुक देह हो जाने पर गैर सदस्य अपना रुपया लेने को दौड़ पड़ेंगे।

मन्त्री—समिति के पंचों को कोई वेतन नहीं दिया जाता, केवल मन्त्री को थोड़ा सा वेतन दिया जाता है। यदि मन्त्री उसी गांव का रहनेवाला हो तो अच्छा है, क्योंकि वह सदस्यों से भली भांति परिचित होगा। परंतु पटवारी को किसी भी अवस्था में मन्त्री न बनाना चाहिए, क्योंकि उसका गांव में बहुत प्रभाव होता है, सम्भव है कि वह पचायत के अनुशासन में न रहे, और सदस्य उसे दबाते रहें। यदि गांव की समिति में कोई शिक्षित सदस्य हो तो उसे मन्त्री बनाया जाना चाहिए यदि कोई सदस्य शिक्षित न हो तो गांव के शिक्षक को मन्त्री बनाना चाहिए।

रक्षित कोष—सहकारी साख समितियों की स्थापना लाभ की दृष्टि से नहीं की जाती, इसलिए अपरिमित उत्तरदायित्व वाली समितियों में तो लाभ बाँटा ही नहीं जाता, और यदि बाँटा भी जाता है तो प्रांतीय सरकार का आज्ञा लेकर। परिमित दायित्व वाली समितियाँ लाभ बाँट सकती हैं, परंतु उनको भी यथेष्ट धन रक्षित कोष में जमा करना पड़ता है।

सहकारी साख समितियों का प्रबंध-व्यय बहुत कम होने के कारण, तथा लाभ न बाँटने के कारण, रक्षित कोष यथेष्ट जमा हो जाता है। प्रत्येक साख समिति के लिए रक्षित कोष अत्यन्त आवश्यक है। जब तक समिति के पास यथेष्ट कोष न हो जावे, तब तक वह सबल नहीं बन

सकती। रक्षित कोष किन्ना भी अवस्था में बाटा नहीं जा सकता, उसका उपयोग समिति के कार्य में हानि होने पर उसे पूरा करने में हाता है, यदि किन्ना देनदार से रुपया वसूल न हो अथवा किसी वस्तु के बेचने में हानि हो तो राखन कोष से पूरा किया जाता है। यदि समिति मग हो जावे तो रक्षित कोष या तो किन्ना ग्राम सहकारी समिति को दिया जावेगा या रजिस्ट्रार का अनुमति से किन्ना माहजनिक कार्य में खप किया जावेगा। परिमित दायित्व वाली समितियाँ अपने रक्षित कोष को, अपने व्यापार में न लगाकर, बाहर किन्ना बैंक में रखती हैं, किन्तु ऐसा वे ही समितियाँ करती हैं जो ग्राम सदस्यों का रुपया भी जमा करती हैं। अपरिमित दायित्व वाला समितियाँ रक्षित कोष के धन को अपने निजी कार्य में लगाती हैं, बाहर जमा नहीं करती।

परिमित और अपरिमित दायित्व—पहले कहा जा चुका है कि कृषि सहकारी साल समितियाँ अपरिमित दायित्व वाली होती हैं और नगर सहकारी साल समितियाँ, तथा जिन समितियाँ के अधिकतर सदस्य किसान नहीं होते, वे परिमित या अपरिमित किन्ना भी प्रकार का दायित्व स्वीकार कर सकती हैं। किन्तु जिन सहकारी समितियों की सदस्य ग्राम समितियाँ ही, उनका दायित्व परिमित हो होगा। ऐसा समितियाँ प्रांतीय सरकार से आशा लेकर ही अपरिमित दायित्व वाली बन सकती हैं। भारतवर्ष में सब सेटून बैंक, बैंकिंग यूनियन, तथा अधिकतर नगर सहकारी तथा बैली साल समितियाँ, जिनमें अधिकतर किसान सदस्य नहीं होते, परिमित दायित्व वाली होती हैं। किसानों की ग्राम समितियाँ अपरिमित दायित्व वाली होती हैं।

यदि किसी समिति को हानि हो जावे तो सबसेपहले उस सदस्य से रुपया वसूल किया जावेगा, जिनसे श्रुत लिया है। यदि उससे वसूल न हुआ तो जमानत देनवाले से वसूल किया जावेगा। यदि उससे वसूल न हुआ तो रक्षित कोष से हानि भर दी जावेगी। यदि उससे भी हानि

घट सकेगी, जिसकी अत्यन्त आवश्यकता है। जब तक से टून बैंक सुसंगठित न हो और जब तक वे समितियों की आवश्यकता से अधिक पूँजी का उचित उपयोग करने में योग्य न हो जावें तथा आवश्यकता पड़ने पर समितियों को शीघ्र ही पूँजी देन की योग्यता प्राप्त न कर लें, तब तक गैर सदस्यों में द्विपाजिट मैना जोखिम का काम है, क्योंकि सनिक भी सन्देह हो जाने पर गैर सदस्य अपना रुपया लेन को दौड़ पड़ेंगे।

मन्त्री—समिति के पंचों को कोई वेतन नहीं दिया जाता, केवल मन्त्री को थोड़ा सा वेतन दिया जाता है। यदि मन्त्री उसी गांव का रहनेवाला हो तो अच्छा है, क्योंकि वह सदस्यों से भली भाँति परिचित होगा। परन्तु पटवारी को किसी भी अवस्था में मन्त्री न बनाना चाहिए, क्योंकि उसका गांव में बहुत प्रभाव होता है, सम्भव है कि वह पचायत के अनुशासन में न रहे, और सदस्य उस दबाते रहें। यदि गांव की समिति में कोई शिक्षित सदस्य हो तो उसे मन्त्री बनाया जाना चाहिए यदि कोई सदस्य शिक्षित न हो तो गांव के शिक्षक को मन्त्री बनाना चाहिए।

रक्षित कोष—सहकारी माल समितियों की स्थापना लाभ की दृष्टि से नहीं की जाती, इसलिए अपरिमित उत्तरदायित्व वाली समितियों में तो लाभ बाँटा ही नहीं जाता, और यदि बाँटा भी जाता है तो प्रांतीय सरकार का आश लेकर। परिमित दायित्व वाली समितियाँ लाभ बाँट सकती हैं, परन्तु उनको भी यथेष्ट धन रक्षित कोष में जमा करना पड़ता है।

सहकारी माल समितियों का प्रबंधन-व्यय बहुत कम होने के कारण, तथा लाभ न बाँटने के कारण, रक्षित कोष यथेष्ट जमा हो जाता है। प्रत्येक माल समिति के लिए रक्षित कोष अत्यन्त आवश्यक है। जब तक समिति के पास यथेष्ट कोष न हो जावे, तब तक वह सबल नहीं बन

सकती। राक्षत कोष किंवा मा अवस्था में बाटा नहीं जा सकता, उसका उपयोग समिति के कार्य में हानि होना पर उसे पूरा करने में होता है, यदि किंवा देनदार से रुपया वसूल न हो अथवा किंवा वस्तु के बेचने में हानि हो तो राक्षत कोष से पूरा किया जाता है। यदि समिति मग हो जावे तो राक्षत कोष या तो किंवा अन्य सहकारी समिति को दिया जावेगा या रजिस्ट्रार का अनुमति से किमी मावजनिक कार्य में व्यय किया जावेगा। परिमित दायित्व वाली समितिया अपने राक्षत कोष को, अपने व्यापार में न लगाकर, बाहर किसी बैंक में रखती हैं, किन्तु ऐसा वे ही समितिया करती हैं जो गैर-सदस्यों का रुपया भी जमा करती हैं। अपरिमित दायित्व वाला समितिया राक्षत कोष के धन का अपने निजी कार्य में लगाती हैं, बाहर जमा नहीं करती।

परिमित और अपरिमित दायित्व—पहल कहा जा चुका है कि कृषि सहकारी साल समितिया अपरिमित दायित्व वाली होती हैं और नगर सहकारी साल समितिया, तथा पिन समितिया के अधिकतर सदस्य किसान नहीं होते, वे परिमित या अपरिमित किंवा भी प्रकार का दायित्व स्वीकार कर सकते हैं। किन्तु जिन सहकारी समितियों की सदस्य अन्य समितिया हो, उनका दायित्व परिमित हो होगा। ऐसी समितिया प्रांतीय सरकार से आज्ञा लेकर ही अपरिमित दायित्व वाली बन सकती हैं। भारतवर्ष में सब सेट्रल बैंक, बैंकिंग यूनियन, तथा अधिकतर नगर सहकारी तथा बैंकी साल समितिया, जिनमें अधिकतर किसान सदस्य नहीं होते, परिमित दायित्व वाली होती हैं। किसानों की साल समितिया अपरिमित दायित्व वाली होता हैं।

यदि किसी समिति को हानि हो जावे तो तबप्रथम उस सदस्य से रुपया वसूल किया जावेगा, जिसने श्रृण लिया है। यदि उससे वसूल न हुआ तो जमानत देनवाल से वसूल किया जावेगा। यदि उससे वसूल न हुआ तो राक्षत कोष से हानि भर दी जावेगी। यदि उससे भी हानि

पूरी न हुई तो समिति की पूँजी का उपयोग किया जावेगा। यदि समिति की पूँजी देकर भी गानि पूरी न हो सक तो समिति के सदस्यों को समिति के देनदारों का रूपया चुकाना होगा। प्रत्येक सदस्य को कितना रूपया देना होगा, इसका हिसाब लिक्वीडेटर लगाएगा। व्यावहारिक दृष्टि से अपरिमित दायित्व का यही अर्थ निकलता है, किन्तु सिद्धांत से प्रत्येक सदस्य व्यक्तिगत रूप से सारे ऋण को चुकाने को बाध्य है, यह उसी दशा में हो सकता है कि जब और सदस्यों से रूपया बसूल न हो सके।

समिति की सार्व-साधारण सभा अपनी मीटिंग में समिति की साल निर्धारित करती है, पंचायत उससे अधिक ऋण नहीं ले सकती। समिति की साल को निर्धारित करने के लिये यह आवश्यक है कि समिति के सदस्यों की सम्पत्ति का हिसाब लगाया जाये। भारतवर्ष के भिन्न भिन्न प्रांतों में समिति के सब सदस्यों की सम्पत्ति की एक चौपाई से आधी तक साल निर्धारित की जाती है। समिति एक हैसियत रजिस्टर रखती है, जिसमें प्रत्येक सदस्य की हैसियत का लेखा रहता है। हैसियत-रजिस्टर का प्रति वर्ष सशोधन होता है और प्रत्येक सदस्य की हैसियत का यथाथ लेखा रखने का प्रयत्न किया जाता है।

सदस्यों का ऋण—यह भी निश्चित कर दिया जाता है कि प्रत्येक सदस्य अधिक से अधिक कितना उधार ले सकता है। किसी भी अवस्था में सदस्य की सम्पत्ति का ५० प्रतिशत से अधिक उधार नहीं दिया जा सकता। रूपया उधार देते समय, पंचायत कज लेन का उद्देश्य तथा सदस्य की चुकान की शक्ति का अनुमान लगाती है, तमो कज देना निश्चय करती है। सहकारिता आन्दोलन का सिद्धांत है कि ऋण अनुत्पादक या व्यर्थ के कार्यों के लिये न दिया जावे। किन्तु भारतवर्ष में सहकारी साल समितियाँ विवाह, धाढ़, तथा अन्य सामाजिक कार्यों के लिये भी उधार देती हैं। पंचायत का यह मुख्य कर्तव्य

है कि वह इस बात का ज्ञान करे कि सदस्य कर्ज किस काम के लिये ले रहा है। साथ ही उसे इस बात का भी पता लगाना चाहिए कि सदस्य ने घन उसी काम में व्यय किया है, अथवा किसी अन्य काम में। यदि सदस्य ने किसी अन्य काम में खर्चा लगाया है तो पचापत को खर्चा वापिस ले जाना चाहिए।

सहकारी मास समिति के सदस्यों को एक-दूसरे पर दृष्टि रखनी चाहिये कि वे घन का दुरुपयोग तो नहीं करते समय पर कर्ज चुकाते हैं, अथवा किसी को ऋणन का प्रयत्न करते हैं। पचापत श्रृण देते समय ही सदस्यों का स्थिति को दृष्ट में रखते हुए कितने बाँच देती है, उसका यह मुद्दा कदाव्य है कि वह दम्मे कि सदस्य समय पर किरतें चुकाता है। यदि किसी अनिवाय कारण वरा सदस्य किरत न चुका सक (जैसे कुल नष्ट हो जान पर) तो उन का विवाद बढा देना चाहिए।

समितियाँ अधिकतर नीचे लिखे कार्यों के लिये श्रृण देती हैं —
 (१) खेतीबारी के लिये, मासगुप्तारी तथा लगान देन के लिये। (२) भूमि का मुबार करने के लिये। (३) पुराने श्रृण का चुकान के लिये। (४) गृहस्थी के कार्यों के लिये (५) व्यापार के लिये। (६) भूमि खरीदन के लिये। यह कहना अत्यन्त कठिन है कि किन कार्यों के लिये कितना खर्चा निभा जाना है। बहुधा सदस्य प्रार्थनात्र में तो खेती-बारी के लिये खर्चा लन को बाग निम्नता है, परन्तु उन करने का व्यय करता है किसी सामाजिक काम पर। समितियों ने अभी तक इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया है।

समय की दृष्टि से श्रृण दो प्रकार के होते हैं, अथवा दोड़े समय के लिये तथा अधिक समय के लिये। जो श्रृण दोड़े समय के लिये निभा जाना है, उसका उपयोग खेतीबारी के घरे में (अथवा बीज, खाद, देन आदि वस्तुओं के खरीदने में) तथा अन्य आवश्यक खर्चों

में होता है। अधिक समय के लिये लिया हुआ मृत्तु भूमि बरीदने, कीमती यंत्र लेने तथा पुराना कल चुकाने के काम आता है। प्राचीन प्रेमिका इनकायरी कमेटियों की सम्मति है कि कृषि सहकारिता समिति का अपने सदस्यों को तीन वर्ष से अधिक के लिए मृत्तु नहीं दे सकती। सहकारिता आन्दोलन में कार्य करनेवालों का भी यही धारणा है। लम्बे समय के लिये मृत्तु देने का कार्य सहकारी भूमि-व्ययक पैदा हो कर सकते हैं।

सहकारी कृषि छात्र समिति की सफलता के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि सदस्य सहकारिता के सिद्धांतों का समझें। इसलिए समिति का संगठन करते समय, उन्हें सहकारिता के सिद्धांतों की शिक्षा देना चाहिये। ग्रामीण सदस्य यही समझते हैं कि सहकारिता छात्र समिति का सरकार द्वारा खोले हुये बैंक हैं जो हम लोगों को मृत्तु देते हैं। वे कभी स्वप्न में भी यह नहीं सोचते कि समिति हमारी ही है और हम अपरिमित दायित्व के द्वारा उचित सुद पर पूँजी पा सकते हैं। जब तक सदस्यों में स्वावलम्बन का भाव जागृत नहीं होता, तब तक सहकारिता आन्दोलन सफल नहीं हो सकता।

आय-व्यय निरीक्षण—समितियों का आय-व्यय निरीक्षण रजिस्ट्रार की अधीनता में होता है। रजिस्ट्रार सहकारी विभाग के आय-व्यय निरीक्षकों से जांच कराता है, यदि कार्य किसी गैर सरकारी सस्था को दे दिया गया हो तो रजिस्ट्रार को उस सस्था के आडिटरों को लायसेंस देता है, सभी यह आय-व्यय निरीक्षण कर सकते हैं।

आडिटर इस बात की भी जांच करता है कि कितना व्यय सदस्यों पर उधार है, जिसके चुकाने की अवधि समाप्त हो गई। वह समिति की लानी दनी का भी हिसाब देखता है। उसको यह भी देखना चाहिये कि समिति का कार्य सहकारिता के सिद्धांतों के अनुसार हो रहा है, अथवा नहीं। उसे समिति की आर्थिक स्थिति की पूरी जांच

करनी चाहिये। उसे देखना चाहिये कि श्रृणु उचित समय क लिये तथा उचित कार्यो क वाता दिये गये हैं, आवश्यक जमानत ली है, अथवा नहीं, और सदस्य ठीक समय पर श्रृणु बुकाते हैं या नहीं, कहा ऐसा तो नहीं होता कि सदस्य ठीक समय पर श्रृणु न बुकाते हो, किन्तु हिमाच में उनका रुपा जमा कर लिया जाता हो, और उतना ही श्रृणु फिर दे दिया जाता हो। कहने का तात्पर्य यह है कि निरीक्षक को पूरी जाँच करनी चाहिये। भारतवर्ष में यह कार्य भली भाँति नहीं हो रहा है। सहकारिता आन्दोलन में बाध करने वालों को तथा मेट्रल बैण्डिंग इनकावरी कमेटी की राय है कि आय व्यय निरीक्षण का कार्य अत्यन्त त्रुटि पूर्ण है।

प्रत्येक प्रान्त में आय-व्यय निरीक्षण का कार्य रजिस्ट्रार की दखरेल में तो होता है परन्तु इस कार्य को भिन्न भिन्न मर्यादों पर रही है। पंजाब में प्रान्तीय सहकारी इस्टिब्लिश्मन्ट क कमचारी, बिहार उड़ीसा में प्रान्तीय फेडरेशन क कमचारी, तथा कुछ प्रांतो में रजिस्ट्रार के कर्मचारी यह कार्य करते हैं। कुछ स्थानों में समितियों ने इस कार्य के लिए आय व्यय निरीक्षक यूनियन स्थापित की है।

अप्रैल सन् १९३१ में 'ग्राम इन्डिया कोऑपरेटिव कानफ्रेंस' का अधिवेशन हैदराबाद में हुआ था। उस सम्मेलन में समस्त भारत में आय-व्यय निरीक्षण की एक ही पद्धति चलाने का निश्चय हुआ और उसका अनुसार एफ योजना भी तैयार की गई थी। उस योजना क अनुसार समितियों का निरीक्षण कार्य मेट्रल बैंक, तथा बैंकिंग यूनियन क हाथ में, और आय व्यय निरीक्षण प्रान्तीय मर्यादों के हाथ में, रहना चाहिये। प्रान्तीय संस्था प्रत्येक जिले में जिला आर्टिस्ट-यूनियन स्थापित करे। उन जिलों की सहकारी समितियाँ तथा मेट्रल बैंक उस आर्टिस्ट यूनियन से सम्बन्धित हो, तथा सब जिला-यूनियन प्रान्तीय संस्था से सम्बन्धित हो। प्रान्तीय इस्टिब्लिश्मन्ट तथा जिला आर्टिस्ट-यूनियन

यन के कमचारियों की नियुक्ति तथा अनुशासन प्रांतीय इस्टिब्लिशमेंट करे। प्रारम्भिक सहकारी समितियों का आय-व्यय निरीक्षण जिला आडिट यूनिशन के आडिटर करें, और सेट्रल बैंक तथा प्रांतीय बैंकों का आय-व्यय निरीक्षण प्रांतीय इस्टिब्लिशमेंट व आडिटर करे।

प्रांतीय इस्टिब्लिशमेंट तथा जिला आडिट-यूनिशन के आडिटर वही लोग नियत किये जायें, जिन्होंने इस कार्य का शिक्षा पाई है और जिनको रजिस्ट्रार ने लायसेंस दे दिया है। यदि कोई आडिटर इस कार्य के योग्य न हो तो रजिस्ट्रार उनका लायसेंस ज़रूरत कर सकता है। इसका अतिरिक्त, रजिस्ट्रार आडिट-यूनिशन तथा प्रांतीय इस्टिब्लिशमेंट नगर बैंक तथा सेट्रल बैंकों से आडिट फीस वसूल करेगी, किन्तु कृषि सहकारी साल समितियों का आय-व्यय निराशंक निःशुल्क होना चाहिए। इस कारण प्रांतीय सरकार प्रांतीय इस्टिब्लिशमेंट का आर्थिक सहायता प्रदान करे। अभी तथा प्रारम्भिक समितियों से थोड़ी आडिट फीस ली जाती है।

समितियों की देख रेख तथा उनका नियन्त्रण रजिस्ट्रार तथा प्रांतीय सहकारी संस्था दोनों ही करते हैं।

संयुक्त प्रान्त की समितियाँ—संयुक्त प्रान्त में १०,००० कृषि सहकारी साल समितियाँ हैं। कृषि साल समितियाँ अपने अपने सदस्यों से ८ से १२ प्रतिशत सूद लेती हैं। जिन समितियों के पास अपनी पूँजी अधिक है, वे सदस्यों को ६ से ८ प्रतिशत सूद पर ही श्रृंखला देती हैं। किन्तु ऐसी समितियों का संख्या ३००० ही है। संयुक्तप्रान्त में सूद की दर ऊँची है, उसको कम करने का प्रयत्न किया जा रहा है। अब संयुक्तप्रान्त में कृषि साल सहकारी समितियों को बहुत उद्देश्य समितियों का रूप दिया जा रहा है। ये बहुत उद्देश्य समितियाँ अथवा ग्राम-बैंक जो अभी तक केवल साख देने का काम करने थे, अब सदस्यों की पैदावार का बिक्री, खेती का सुधार तथा सदस्यों के लिए आवश्यक

वस्तुएँ खादहन का भी काम करते हैं। अभी तक इस घान्त में ५००० ऐसे ग्रामों के अथवा बहु उद्देश्य समितियाँ स्थापित हो चुकी हैं।

भारतवर्ष में समितियों की स्थिति—भारत में कुल कृषि साल सहकारी समितियों की संख्या १,०२,००० से ऊपर है और सदस्यों की संख्या ३८ लाख के लगभग है। उनका पूँजी इस प्रकार है —

रिस्था पूँजी	४,४५,२४,००० रु०
रक्षित कोष	८,८२,३६,००० "
डिनाइट	२,८४,००,००० "
श्रृणु	१२,६५,६८,००० "

कुल कार्यशील पूँजी २६,०७,५८,००० "

इससे यह स्पष्ट है कि इन समितियों की १६ करोड़ रुपये की अपनी पूँजी है, और १३ करोड़ रुपये की उधार ली हुई पूँजी है। उनकी अपनी पूँजी कुल कार्यशील पूँजी की ५५ प्रतिशत से अधिक है, और जैसा जैसा समय व्यतीत होता जाता है, समितियों की निजी पूँजी बढ़ती जाती है।

इन आँकड़ों से ऐसा प्रतीत होता है कि आन्दोलन की स्थिति सतोषजनक है। कि नु असल में ऐसा नहीं है। समितियों का रक्षित कोष वास्तव में 'रक्षित' नहीं है। वह अलग न रखा जाकर बहुधा उन समितियों के कारोबार में ही लगा दिया जाता है।

भारतवर्ष में मान्य समितियों का एक मुख्य दोष यह भी है कि वे अधिकतर बाहरी पूँजी पर अवलम्बित रहती हैं। जैसा कि हम आगे देखेंगे, अधिकतर घनी शहरा लोगों का ही रूपया मेन्टल बैंको के द्वारा गाँवों की समितियों के पास पहुँचता है, और वही रकम निधन ग्रामीणों को मिलना है।

साल समितियों की आडिट रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि लगभग ५० प्रतिशत से अधिक श्रृणु ऐसा है, जिसका अदायगी की तिथि कमी की

नकल गई और मदस्यो न उस श्रृण को नहीं चुकाया। वास्तव में वही कही तो स्थिति ऐसी बिगड़ गई कि सेट्रल बैंक को कुछ धन रखन पड़े, जि होन साल समितियों के मदस्यो की कुर्को ही, इस भी कर्ज का बहुत सा रुपया बसूल नहीं हो पाया। जब मून श्रृण को अदायगी को यह दशा है तब उस पर जो सूद इकट्ठा हो गया है उसका तो कहना ही क्या। बरार आदि में जब सेट्रल बैंक ने इस के एवज में मदस्यो की मूमि लली तो उनका प्रबंध करना बर्तन हो गया और सरकारी मालगुजारी अपन पास से देनी पड़ी। इसका परिणाम यह हुआ कि मध्यप्रांत, बरार, बिहार, उड़ीसा और बंगाल में आन्दोलन मिना त राक़िहोन और निष्प्राण हो गया। लोगों को मानने लगा कि आन्दोलन मर जावेगा। सन् १९४० में नया कर्ज का करोड़ रुपये में भी कम दिया गया। इसके बाद नये कर्ज और भी कम कर दिये गये। निदान, साल पहल से बहुत सीमित और मर्यादित कर दी गई।

भारतवर्ष में जब कृषि सहकारी समितियों का वार्षिक आय मर निरीक्षण होता है तब निरीक्षक उनकी आर्थिक स्थिति के अनुसार उनको ए, बी, सी, डी और ई वर्ग में रखते हैं। 'ए' वर्ग की समितियाँ बहुत अच्छी समझी जाती हैं, 'बी' वर्ग की अच्छी, 'सी' वर्ग की साधारण, 'डी' वर्ग की बुरी, और 'ई' वर्ग की समितियाँ अत्यंत बुरी समझी जाती हैं। 'ई' वर्ग की समितियों को दिवालिया कर दिया जाता है। रिपोर्टों से शत होता है कि समितियों में से एक बहुत बड़ी संख्या 'डी' और 'ई' वर्ग में है। बम्बई, मध्यप्रांत, उड़ीसा, और आसाम में 'डी' और 'ई' वर्ग की समितियों की संख्या ४० प्रतिशत से अधिक है, और, शेष प्रांतों में २५ प्रतिशत से अधिक इसी वर्गों में है। ६ प्रांतों में १० प्रतिशत से भी कम समितियाँ 'ए' और 'बी' वर्गों में हैं। इस तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि कृषि सहकारी

बालुएँ खादन का मो काम करते हैं। अभी तक इस प्रान्त में ५००० ऐसे ग्राम-पैक अथवा बहु उद्देश्य समितियाँ स्थापित हो चुकी हैं।

भारतवर्ष में समितियों की स्थिति—भारत में कुल कृषि सास्य सहकारी समितियों की संख्या १,०२ ००० से ऊपर है और सदस्यों की संख्या १८ लाख के लगभग है। उनका पूँजा इस प्रकार है —

रिस्सा पूँजा	४,४५,२४,००० रु०
रक्षित कोष	८,८२,२६,००० "
बिनाभित	० ८४,००,००० "
श्रृंख	१२,६५,६८,००० "
कुल कार्यशील पूँजा	२६,०७,५८,००० "

इससे यह स्पष्ट है कि इन समितियों की १६ करोड़ रुपये का अपनी पूँजा है, और १२ करोड़ रुपये का उधार सा रुड पूँजी है। उनकी अपनी पूँजा कुल कार्यशील पूँजी का ५५ प्रतिशत स अधिक है, और बेश बेश समय व्यतात होता जाता है, समितियों की इनकी पूँजी बढ़ती जाती है।

इन श्रॉकडों से ऐसा प्रताप होता है कि आन्दाजन का स्थिति सुदोषजनक है। कि तु असल में ऐसा नहीं है। समितियों का रक्षित कोष वास्तव में 'रक्षित' नहीं है। वह असल न रखा जाकर बहुधा उन समितियों के कारोबार में ही लगा दिया जाता है।

भारतवर्ष में लाख समितियों का एक मुख्य दोष यह था है कि वे अधिकतर बाहरी पूँजी पर अवलम्बित रहती हैं। जैसा कि हम आगे देखेंगे, अधिकतर घनी शहरा लोगों का ही करपा सटल बैटो के द्वारा गाँवों की समितियों के पास पहुँचता है, और वही करपा निचन प्रामीणों का मिलना है।

सास्य समितियों की आर्टिट रिपोर्ट स जात होता है कि लगभग ५० प्रतिशत से अधिक श्रृंख ऐसा है, जिसका अदायता की विधि कमी की

निकल गई और मदस्यो न उन श्रृण को नहीं चुकाया। वास्तव में कहीं कहीं तो स्थिति ऐसा बिगड़ गई कि सेट्रल बैंको को कुक श्रमोन रखन पड़े, जि होन साल समितियों न मदस्यो को कुर्को की, फिर भी कज का बहुत सा रुपया बचल नहीं हो पाया। जब मूल श्रृण को अदायगी को यह दशा है सब उस पर जो सूद इकट्ठा हो गया है, उसका तो कहना ही क्या। बरार आदि में जब सेट्रल बैंको ने कज क एवज में मदस्यो को मूमि लेलो तो उनका प्रब ब करना कठिन हो गया और सरकारी मालगुजारी अपन पास से देनी पड़ी। इस सब का परिणाम यह हुआ कि मध्यप्रांत, बरार, बिहार, उड़ीसा और बंगाल में आन्दोलन निता त रुकियोन और निष्पाण हो गया। लोगो को भय होने लगा कि आन्दोलन मर जावेगा। सन् १९४० में नया कज सात करोड रुपये से भी कम दिया गया। इसक बाद नये कर्ज और भी कम कर दिये गये। निदान, साल पहल से बहुत सीमित और मर्यादित कर दी गई।

भारतवर्ष में जब कृषि सहकारी समितियों का वार्षिक आय व्यय निरीक्षण होता है तब निरीक्षक उनकी आर्थिक स्थिति के अनुसार उनको ए, बी, सी, डी और ई वर्ग में रखते हैं। 'ए' वर्ग की समितियाँ बहुत अच्छी समझी जाती हैं, 'बी' वर्ग की अच्छी, 'सी' वर्ग की साधारण, 'डी' वर्ग की बुरी, और 'ई' वर्ग की समितियाँ आय त बुरी समझी जाती हैं। 'ई' वर्ग की समितियों को दिवालिया कर दिया जाता है। रिपोर्टों से ज्ञान होता है कि समितियों में से एक बहुत बड़ी मरया 'डी' और 'ई' वर्ग में है। बम्बई, मध्यप्रांत, उड़ीसा, और आनाम में 'डी' और 'ई' वर्ग की समितियों की मरया ४० प्रतिशत से अधिक है, और, शेष प्रांतों में २५ प्रतिशत से अधिक इन्हीं वर्गों में है। ६ प्रांतों में १० प्रतिशत से भी कम समितियाँ 'ए' और 'बी' वर्गों में हैं। इन तरह यह स्पष्ट हो जाता है कि कृषि सहकारी

समितियों की दशा अत्यंत शोचनीय है। विद्यमान वर्षों में लगभग ६ प्रतिशत समितियाँ प्रविवर्धन निवालिवा होनी रही। समितियों की संख्या घटी नहीं। इसका कारण यह था कि साथ-साथ नई समितियों का भी संगठन होता रहा। सर डालिङ्ग व अनुसार सहकारिता आन्दोलन के आरम्भ से आज तक जितनी समितियाँ स्थापित हुईं, उसकी १४ प्रतिशत दीवालिया हो गई।

सहकारी साल समितियों से जैसी आशा थी, वे मफज नहीं हुई। यह तो इसी से विदित हो जाता है कि पुराने और मफज साल समितियों व सदस्यों की संख्या बढ नहीं रहा है। ग्रामीण समिति का सदस्य बनने के लिए कोई व्यापक विशेष उत्साह नहीं दिखता। अवांछित रूप व उपरांत भी आन्दोलन निर्भीक और निरंतर क्या है, इसके कारण अंतिम परिच्छेद में लिख जावेंगे।

कुछ बातों के सम्बन्ध में सहकारिता आन्दोलन के कार्यकर्ताओं में पिछले वर्षों में धार मतभेद रहा है, जैसे कृषि सहकारी साल समिति का दायित्व अपरिमित न होकर परिमित होना चाहिए। जबल सहकारी साल समिति से ग्रामीणों की आर्थिक समस्याएँ हल न होंगी, उन्हें सब कामों में सहकारी संगठन की आवश्यकता है, अतएव साल समिति के स्थान पर बहु उद्देश्य सहकारी सामाजिक स्थापित की जानी चाहिए, जो ग्रामीणों की अधिकांश आर्थिक आवश्यकताओं का पूरा कर सक, इत्यादि। इन सब प्रश्नों पर हम सहकारिता आन्दोलन के पुनर्निर्माण साल परिच्छेद में प्रकाश डालेंगे। इसमें तनिक भी मन्द नहीं कि साल आन्दोलन ऐसा स्थिति में पहुँच गया है कि यदि उसमें आवश्यक सुधार नहीं हुआ तो उसका सारा दाँचा गिर पड़ेगा और आन्दोलन नष्ट हो जायगा।

छठा परिच्छेद

नगर सहकारी साख समितियाँ

शहरी जनता और सहकारिता आन्दोलन—शहरी की जनता आर्थिक दृष्टि से तीन भागों में बाँटी जा सकता है। (१) उत्पादन कार्यों में लगे हुए मनुष्य, (२) व्यापारी अर्थात् दलाल, और (३) उपभोक्ता। जैसे ही प्रत्येक मनुष्य उपभोक्ता है कि तु सहकारिता के द्वारा अपना स्थिति सुधारन का प्रयत्न केवल भ्रमजीवी तथा नियमित वेतन पानवाला मध्यम श्रेणी के मनुष्य ही करते हैं। इन कारण हम इन्हें ही उपभोक्ता वर्ग में रखते हैं। उत्पादक वर्ग में अनन्त धन राशि के स्वामी मिल-भालियों से लेकर छोटे से छोटे जुलाहे अथवा अल्पकारीगर—सभी आ जाते हैं। पूँजापतियों को साख देन का कार्य सहकारी साख समितियाँ नहीं कर सकती। इसके लिए व्यापारिक बैंक मौजूद हैं। सहकारिता आंदोलन तो केवल निचले तथा निर्धनों के लिए है। यह उद्योग वर्गों में लगे हुए कारीगरों को सहकारी साख समितियाँ आवश्यक सहायता पहुँचा सकती है। व्यापारी वर्ग में छोटे बड़े सभी व्यापारी आ जाते हैं। बड़े व्यापारियों के लिए व्यापारिक बैंक खुले हुए हैं तथा वे अधिक निचले नहीं हैं। अस्तु, सहकारिता आंदोलन यदि थोड़ी बहुत सहायता कर सकता है तो केवल छोटे छोटे निचले व्यापारियों की।

साधारणतः उपभोक्ताओं का साख की आवश्यकता न होनी चाहिये, क्योंकि वह तो अतिम खरीददार होता है। वह किसी भी वस्तु को बेचने के लिए नहीं खरीदता, वह तो वस्तु का उपभोग करता है, इस कारण उसको नफ़ा दाम ही चुकाना चाहिए। यदि वह उधार

मौगता है तो इसका अर्थ है कि वह आय से अधिक व्यय कर रहा है। ऐसी अवस्था में वह कन को नहीं चुका सकेगा। अस्तु, साधारणतः उपभोक्ताओं को उधार देना ज़ोन्विम का काम है। किन्तु विशेष अवस्था में उन्हें उधार की आवश्यकता पड़ जाती है। मानलौजिये किसी मनुष्य के पास यथेष्ट सम्पत्ति अथवा धन है, पर वह धन कहीं लगा हुआ है, उस समय नहीं मिल सकता, और ठीक ऐसे समय ही उस आदमी को किमा आवश्यक कार्य के लिये रुपये की आवश्यकता है। ऐसी दशा में उसे कन व सिवा कोई चारा नहीं रहता। कुछ लोग ऐसे भी हो सकते हैं, जिनके पास न तो सम्पत्ति ही है, और न उ होने कुछ बचाया ही है, उन्हें कन की आवश्यकता पड़ती है। नोकरी छूट जान पर तथा घर में लम्बी बामारी का ज्ञान के कारण उन्हें कन लेना पड़ता है। इन लोगों के पास जमानत कुछ नहीं होता। व्यापारिक बैंक थोड़ा ऋण नहीं देते, फिर, बिना जमानत तो वे ऋण दे ही नहीं सकते। ऐसे लोगों के लिये नगर सहकारी बैंक आवश्यक हैं। ये बैंक मज़दूरी या थोड़ा बेतन पानेवालों को महाजन के पत्रों से बचाते हैं। इसके आतिरिक्त, ये बैंक साधारण स्थिति के लोगों में मितव्यायता का भाव जागृत करते हैं, और उनकी थोड़ी सी बचत को जमा करत हैं। आड़े समय पर यह बैंक निघन मज़दूरी को सहायता पहुँचा सकते हैं। मिमित पूँजी बाल बैंक इन लोगों का समस्या को हल नहीं कर सकते।

नगर सहकारी साख समितियाँ—नगर सहकारी साख समितियाँ तीन प्रकार की होती हैं।—(१) बेतन पानेवालों की समितियाँ (२) मिल मज़दूरी की समितियाँ और (३) जातीय समितियाँ। मित्र मित्र दफ्तरी तथा कारखानों में कार्य करनेवाले बेतनभोगी कमचारियों की समितियाँ पृथक् होती हैं। इस प्रकार की साख समितियाँ आवश्यकतर सफल हो जाती हैं। उसका कारण यह होता है कि सदस्य सिद्धित होते हैं, तथा उन्हें नियमों के पालन का आ अभ्यास होता है, उसके

कारण समिति का काय सुचारु रूप में चलता है। इसके अतिरिक्त, यदि साल समिति को उस दफ्तर के प्रधान अफसर की भी सहानुभूति मिल जावे तो विर कहना ही क्या है! उनसे दिये हुए श्रृण को वसूल करने में बहुत सहायता मिलती है। सहकारी साल समिति को चाहिए कि प्रत्येक मास सदस्यों को वेतन मिलन पर कुछ न कुछ जमा करने के लिये उत्साहित करे, जिससे उनमें मितव्ययिता का भाव जागृत हो।

मिल मजदूरों की सहकारी साल समितियाँ भी ऊपर लिखा जैसा ही होता हैं। अन्तर इतना ही है कि इनके सदस्य अशिक्षित होते हैं तथा वे श्रृण भी थोड़ा लत हैं। ऐसी साल समितियों के लिये मिल मालिकों का सहानुभूति लाभदायक सिद्ध होता है। कुछ विद्वानों का कथन है कि सदस्यों को दिया हुआ श्रृण आम मालिकों के द्वारा वसूल किया जावे, किन्तु लालच का मत इसमें बिकर है। यदि मिल मालिक मजदूर के वेतन में से काट कर श्रृण चुकावेंगे तो मजदूर साल समिति को मिल मालिक का वैङ्ग समझेगा, और इस प्रकार वह कभी भी सहकारिता आन्दोलन को न समझ सकेगा। अस्तु, श्रृण वसूल करने में मिल मालिकों की सहायता यथा सम्भव न ली जावे, हाँ, उनकी सहानुभूति बहुत उपयोगी है। मिल मजदूरों का सहकारी साल समितियों के निरीक्षण और देखभाल की अत्यन्त आवश्यकता है। उनके पना उनका सफल हाना कठिन है। इसलिये जो पूँजीपति अपने मजदूरों की आर्थिक स्थिति को सुधारना चाहें, वे एक मुपरवाहजर नियुक्त कर दें, जो उन मिलों के मजदूरों की साल समितियों को देखभाल करता रहे। शम्बई तथा अन्य औद्योगिक क्षेत्रों के कुछ विवेकशील मिल मालिकों ने अपने मजदूरों के हितार्थ साल समितियाँ स्थापित की हैं। किन्तु मिल मजदूरों को साम्ब से भी अधिक सहकारी स्टोर की आवश्यकता है, जिससे वे अपने दैनिक जीवन की वस्तुएँ उचित मूल्य पर खरीद सकें। इससे अतिरिक्त सहकारी गृहनिर्माण तथा सहकारी भ्रम-

मततरया भी, मजदुरी क लरये, उपयगी होगी ।

भारतवर्ष में जातीय सहकारी साख ममततरया भी स्थापन की गई । उनमें प्रारम्भ में बहुत जोश होता है, कतरु पीछे वह ठंडा पड़ जाता है और कायकता शरवल हो जाती है । श्रृण देते समय इस त का ध्यान नहीं रता जाता क श्रृण कतरना दरया आव न उसके कुल करन में ही कड़ाई की जा सकती है, क्योकि जाति भाई का हाज रहता है । यकनर इन ममततरया में ऊपर लरसे दोष होने हैं, तर भी कुछ ममततरया अपनी जातरया का श्रच्छा सवा कर रही हैं ।

कारोगर और सारस—इनके शतररररर नगरों में गृह उपाग ँधी में लगे हुए कारोगरों की भी साख का आवश्यकता होता है । कारोगरों को मरभरत पूँजी वाल बैङ्क उचार नही देत । कारण यह है क क तो कारोगरों को थोड़ी पूँजी की आवश्यकता हाता है, तरस तेना ही क लरये लाभदायक नहीं होता, दुमरे, कारोगरों क पास कोई मानत भी नहीं हाती । जमानत क कतरा बैङ्क कतरी को भी श्रृण ही देत । इस लरए बेकारे कारोगर उन थोक व्यापाररयो क चगुल कँस जात हैं जो उनके तैयार माल का व्यापार करते हैं । व्यापारी कारोगरों को या ता कचना माल उचार दे देत हैं, शयवा उ हैं कचा माल लन क लरये कय्या उचार दे देते हैं, शर्त यह होती है क उ हैं तार माल उसी व्यापारी क हाथ बेचना होगा । कल यह होता है क कधन कारोगर व्यापारी का कतर दास बन जाता है, और व्यापारी क तये माल तैयार करता रहता है । व्यापारी उसको कम से कम मजदुरा देता है, इस प्रकार व्यापारी उसका शोषण करता है । कारोगर को इस प्रकार क शोषण से कचान क लरये नगर सहकारी साख ममततरया की शत्य त आवश्यकता है । इस प्रकार की साख ममततरया प्रत्येक घष क लरये अलग अलग होगी, जैसे लुणाही के लरये नकर साख ममत । अभी तक इस देश में उत्पादक सहकारी साख

समितियाँ अधिक सराया में नहीं खोली गई और न इस आन्दोलन को अधिक सफलता ही मिली है। इसका कारण यह है कि साल समिति केवल पूँजी का प्रबन्ध करती है। कारीगर को कच्चे माल के लिये उसी व्यापारी की शरण में जाना पड़ता है। कारीगर अपने धंधों में कुशल होना है, किंतु वह कच्चा माल खरीदन तथा तैयार माल बेचन की कला नहीं जानता। इस कारण समिति को यह सब कार्य अपने हाथ में लेना चाहिये।

पीपल्स बैंक—नगरों में व्यापारियों के लिये मिश्रित पूँजी वाले व्यापारी बैंक हैं, किंतु वहाँ तथा कस्बों में छोटे छोटे खोमचे वाले, दुकानदार तथा छोटे व्यापारी भी होते हैं, जिन्हें साल की आवश्यकता होती है। इन दुकानदारों के लिये पीपल्स बैंक (खुजती प्रणाली पर) स्थापित किए जान चाहिये। बैंक यह उद्योग धंधों को प्रोत्साहित करने के लिये कारीगरों को भ्रष्ट देता है, तथा गांव की पैदावार की मंडियों तक पहुँचाने वालों को साल देता है। भारतवर्ष में ये बैंक अभी तक बहुत कम खोले जा सके हैं। जो नगर सहकारी बैंक खोले गये हैं वे प्रायः या तो जातीय बैंक हैं अथवा किसी एक पेशे में लगे हुए लोगों के बैंक हैं। बम्बई तथा बंगाल में अवश्य कुछ ऐसे बैंक सफलता पूर्वक कार्य कर रहे हैं।

नगर सहकारी बैंक तथा व्यापारी बैंक में अधिक भेद नहीं है। नगर सहकारी बैंकों में भी सेविंग (बचत), चालू, तथा मुदती जमा होती है। वे केवल सदस्यों को ही भ्रष्ट देते हैं। वे बिल तथा हुन्डी को मुनाने का काम भी करते हैं। बंगाल तथा बम्बई के अतिरिक्त अन्य कहीं भी प्रान्त में नगर सहकारी बैंकों ने अभी तक हुन्डी का काम प्रारम्भ नहीं किया है। नगर सहकारी बैंक शुल्ज डैलिट्ज प्रणाली पर चलाये गये हैं। इन बैंकों की कायशाली पूँजा क्षियात्रिट तथा हिस्सा पूँजी होती है, तथा दायित्व परिमित होता है। नगर सहकारी बैंक का

सगठन कृपि सार्व ममिति जैसा हा हाता है, कवल यह मेर है कि नगर सहकारी बैंको में २५ प्रतिशत लाभ गदित कोर में रक्ष कर बाकी बाँट दिया जाता है ।

नगर मन्कारी बैंक की सफलता क लिए यह आवश्यक है कि कमकारी बैंकिंग क काय में दख हो, तथा बैंक क प्रबन्धकर्ता भी अनु मवा पुक्ष हो । बम्बई के सहकारी नगर बैंक की सफलता का कारण यह है कि वहाँ सर लल्लूभाई सविनदाम, तथा रवर्गीय सर विठ्ठलदाम धेकरस जैसे सुयोग्य और अनुमवा व्यवसायियों न इनका सफल बनान में सहयोग दिया था । बम्बई तथा नि ष में कुछ मातीय बैंको को भा अच्यो सफलता मिली है । इनमें 'शमरा विठ्ठल सहकारी बैंक लिमिटेड' का नाम उल्लेखनीय है । इस बैंक को गारस्वन ग्राहकों न १६० में स्थापित किया था । इन समय इन बैंक को कायशाल पूँजा १८ लाख रुपये क लगभग है ।

बम्बई में मिल मन्त्रो का भा सार्व ममितिर्पा है । इन्हें नगर सहकारी बैंक भी कहत हैं । इनमें एक दोर शास प्रवश कर जाता है । ये सपन सुरक्ष कर्तय अघात् सदस्यों में मितययिता क भाव का प्रचार न कर कवल सदस्यों का श्रुण दन का काय करन लागते हैं । अब इन दोर की ओर ध्यान आकर्षित हुआ है और यह प्रयत्न किया जा रहा है कि सदस्य बैंक में करया बसा करें ।

नगर सहकारी बैंक में, श्रुण लेनेवाल को व्यक्तियों की जमानत देनी होनी है । इस बैंक को समिति का प्रबन्ध एक प्रबन्धकारिणी ममिति करना है । यह बात ध्यान में रखन की है कि मिल मन्त्रो क बैंको में यदि मिल मानिक का को प्रनिनिनि हाता है तो वो कुछ बर करता है, घरी होता है । माधारण सदस्यों को यह विचार हो नही हाता कि ममिति उनको है ।

नगर सार्व सहकारी ममितिर्पा मद्रास और बम्बई प्रान्त में विरुप

रूप से हैं। इन प्रांतों में सभी बड़े कस्बों में नगर साल सहकारी बैंक स्थापित हो चुके हैं, वेमे बंगाल और पंजाब में भी उनकी संख्या बढ़ रहा है। भन्न भिन्न प्रांतों में इन बैंकों की संख्या और पूँजी इस प्रकार है—

प्रांत	संख्या	कार्यशील पूँजी
आसाम	१६३	२७ लाख ६० के लगभग
बंगाल	६०८	६ करोड़ ६० से अधिक
बिहार	१०६	६० लाख ६०
बम्बई	६८५	६ करोड़ ६० से अधिक
मद्रास	११७०	१ करोड़ ७० लाख ६०
पंजाब	७४०	१ करोड़ १२ लाख ६०
सिंध	१११	६६ लाख ६०
संयुक्त प्रांत	५०० से कम	७७ लाख ६०

मध्यप्रांत बरार—केवल अमरावती में एक पीपल्स बैंक है।

देशी राज्यों में, मैसूर में ३०० से अधिक, और बड़ोदा तथा कश्मीर में क्रमशः २६ और २७ नगर साल समितियाँ काम कर रही हैं। समस्त भारत में इनकी संख्या ७००० है।

नगर साल सहकारी समितियाँ रेल टाक आदि नगरकारी काम चारियों, तथा अल्प वेतन भोगी मध्यम भेद्यों के व्यक्तियों, मिल मजदूरों, छोटे दुकानदारों तथा कारीगरों की होती हैं। कृषि साल समितियों की अपेक्षा ये समितियाँ अधिक सफल हुई हैं। ये अधिक मजबूत और आर्थिक दृष्टि से अधिक स्थावलम्बी हैं। इनके दिये हुए ऋण की क्रिस्तें बहुत कम बकाया रहती हैं। एक विशेष बात इन समितियों के सम्बन्ध में यह है कि ये अपनी हिस्सा पूँजी और डिपॉजिटों से ही इतना रूपया पा जाती हैं कि इनका काम अच्छी तरह से चल जाता है, और इन्हें से ढ़ल बैंकों अथवा प्रान्तीय बैंकों से ऋण लेने की आवश्यकता

नहीं पड़ता। सत्तेर में ये अधिक स्वावलम्बी हैं। भारत जैसे देश में, जहाँ बौद्धिक की सुविधा कम है, उनका और अधिक आवश्यकता है।

—०—

सातवाँ परिच्छेद सेन्ट्रल बैंक तथा बैंकिंग यूनियन

—०—

पहला परिच्छेद में नगर सहकारी बैंकों के बारे में लिखा गया है। कुल लोगो का यह विचार था कि ये बैंक ग्रामाण समितियों के लिये भी खपया इकट्ठा कर सकेंगे। इन कारण १९०४ के एक्ट के अनुसार फवल दो प्रकार का माल समितियों स्थापित का गई। किन्तु यह आशा कि ग्रामाण जनता इन समितियों में खपया जमा करेगी, पूरी नहीं हुई, क्योंकि एक तो किसान श्रृंखला है दूसरे उसे बैंक में खपया रखन का अभ्यास नहीं है। प्रारम्भ में सहकारी समितियाँ सट्टा में कम थी, इन कारण उनके लिए कायशील पूँजी इकट्ठो करन में अधिक कठिनाई प्रतीत नहीं हुई। रजिस्ट्रार, समितियों में जम होनवाला इन्वे के अतिरिक्त, प्रान्तीय सरकार तथा धनी व्यक्तियों से खपया लेकर काम चलात थे। पर इस प्रकार अधिक दिनों काम नही चल सकता था।

सेन्ट्रल बैंक—यह आवश्यकता प्रतात हुई कि ऐम सहकारी बैंक खोल जायें, जो नगरों में प्रारम्भिक सहकारी समितियों के लिये धन इकट्ठा करें। १९१२ में दूसरा एक्ट पास हुआ और उसके अनुसार सेन्ट्रल बैंक खोलन की सुविधा हो गई। १९१० और १९१५ के बान में सब प्रकार का सहकारी समितियों का सट्टा बहुत बढ़ गई तथा सेन्ट्रल बैंको की भी स्थापना को गई। मन् १९१२ में दूसरा सहकारिता एक्ट पास हो जाने के उपरान्त सयुक्तप्रान्त, बङ्गाल, तथा मध्यप्रान्त में बहुत से सेन्ट्रल बैंको की स्थापना हुई। १९१५ से १९२० तक सेन्ट्रल

बैंकों का औसत ३०१ था और प्रारम्भिक सहकारी समितियों की संख्या २७,५३५, थी। १९२०-२१ १९२५ तक से-ट्रल बैंकों की संख्या ५०० थी तथा समितियों की संख्या ५५,८८६ थी। इस समय ये संख्याएँ क्रमशः ६०० और १,०४,००० हैं।

से-ट्रल बैंक तीन प्रकार के होते हैं। (१) ऐसे से-ट्रल बैंक, जिनके सदस्य केवल व्यक्ति ही होते हैं। (२) ऐसे से-ट्रल बैंक जिनके सदस्य केवल समितियाँ ही हो सकती हैं। (३) ऐसे से-ट्रल बैंक, जिनके सदस्य व्यक्ति तथा समितियाँ दोनों ही होते हैं। पहला प्रकार के बैंक केवल हिस्सेदारों के बैंक होते हैं। ये सहकारिता के सिद्धान्तों के विरुद्ध हैं। इस कारण अब ऐसे बैंक नहीं रहे। दूसरे प्रकार के बैंक, जिनके सदस्य केवल समितियाँ होती हैं आदर्श सहकारी से-ट्रल बैंक हैं। समितियाँ इन बैंकों की नीति निर्धारित करती हैं, बैंक का प्रबंध भी उही के हाथ में रहता है। ऐसे बैंक को बैंकिंग यूनियन कहते हैं। इन बैंकिंग यूनियनों का मन्त्र व प्रामाण्य समितियों से होता है, प्रामाण्य समितियाँ ही इनका प्रबंध करती हैं। इन बैंकिंग यूनियनों की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि समितियों के सदस्य योग्य तथा प्रभावशाली व्यक्ति हों। यही कारण है कि बैंकिंग यूनियन संख्या में अधिक नहीं हैं। तीसरे प्रकार के से-ट्रल बैंक ही अधिक देखने में आते हैं। उत्तर भारत में बैंकिंग यूनियन संख्या में घटे हैं, और दक्षिण में बहुत कम।

से-ट्रल बैंक का क्षेत्र प्रत्येक प्रांत में भिन्न भिन्न होता है। उस क्षेत्र का सहकारी समितियाँ उसी बैंक में शृणु लती हैं। से-ट्रल बैंक का क्षेत्र दक्षिण तथा पश्चिम भारत में एक जिला, परंतु उत्तर भारत में तहसील ही होती है। इसलिए उत्तर भारत के से-ट्रल बैंकों से सम्बंधित समितियों की संख्या तथा पूर्वा भी कम होती है।

साधारण समझ—से-ट्रल बैंक के हिस्सेदारों की संख्या की

साधारण सभा कहते हैं। सभा के सदस्यों को केवल एक 'वोट' देने का अधिकार होता है। मिश्रित पूँजी वाली कम्पनियों की भाँति, इनमें अधिक हिस्से खराद हैं, उसको एक से अधिक 'वोट' देने का अधिकार नहीं है। साधारण सभा डायरेक्टरों का निर्वाचन करती है।

सञ्चालक (डायरेक्टर)-बोर्ड बैंक का प्रबंध करता है। साधारणतः सेटल बैंक के डायरेक्टर संख्या में अधिक होते हैं, कभी के बहुत से स्वार्यों का प्रतिनिधित्व दाना आवश्यक होता है। मिश्रित प्राप्ति में डायरेक्टरों का संख्या १० से २४ तक है। इससे यह कठिनाई होती है कि पूरा बोर्ड का माटिंग का आयोजन कठिन हो जाता है, इसलिए बोर्ड अपने सदस्यों में से कायकागिणी समितियों का निर्वाचन करता है, जो बैंक का काय चलाती है। बैंक का दैनिक काय अवैतनिक सभा, चेयरमेन तथा कभी एक डायरेक्टर, मेनेजर की सलाह से, करता है। डायरेक्टरों को फ्रीत अवकाश वेतन कुछ नहीं मिलता। कहीं कहीं डायरेक्टर समितियों की आवश्यकता जानने के लिए उनका निरीक्षण करते हैं तथा यह विषय करते हैं कि उनका कितना श्रेष्ठ देना चाहिए। डायरेक्टर बदलते रहते हैं। चेयरमेन तथा मंत्री व्याप्त सदस्यों में से चुन जाते हैं। उत्तराय तथा पूर्वी भारत में चेयरमेन कहीं कहीं सरकारी कर्मचारी भी होता है अधिकतर वह गैर सरकारी ही होता है। प्रायः डायरेक्टर समितियों के प्रतिनिधि ही होते हैं।

मेनेजर—प्रत्येक बैंक एक मेनेजर नियुक्त करता है। मेनेजर प्रत्येक प्रान्त में एक ही काय नहीं करता। कुछ प्रान्तों में वह बैंक का अध्यक्ष रूप में खाने के अनिच्छित, सम्पादन माल समितियों के लिए भी जिम्मेदार होता है। इसलिए उसको सेटल बैंक के दीर्घ करनवाल कर्मचारियों की भाँति देखभाल करना पड़ती है। अन्य प्रान्तों में -- केवल माल समितियों के लिए जिम्मेदार होता है, इसलिए ।

इसलिए उनका प्रामिसरी नोट पर बैंक श्रृणु नहीं दे सकता। मे ट्रल बैंक अर्थ मिमित पूँजी वाल बैंको से श्रृणु नहीं लेते, ये अधिकतर प्राताय सहकारी बैंको से ही लेते हैं। इन बैंको का सम्बन्ध में अगले परिच्छेद में लिखा जायगा। जहाँ प्रा ताय बैंक स्थापित हो चुके हैं, वहाँ से ट्रल बैंक, अर्थ मिमित पूँजीवाले व्यापारिक बैंको तथा दूसरे सेन्ट्रल बैंको में मोटा सम्बन्ध नहीं रख सकते। यह नियम मद्रास और पंजाब में कड़ाई के साथ उपयोग में नहीं लाया जाता। संयुक्तप्रात में एक से ट्रल बैंक दूसरे से ट्रल बैंको को, रजिस्ट्रार की अनुमति लेकर, श्रृणु दे सकता है।

से-ट्रल बैंक अधिकतर सहकारी साल समितियों तथा गैर साल समितियों को ही श्रृणु देते हैं। पंजाब, मैसूर, तवालियर, तथा मद्रास में अब भी से-ट्रल बैंक व्यक्तियों को श्रृणु दत हैं, किन्तु यह अवस्था अब बदल रही है। सहकारी समितियों के पास जमा करने के लिये अधिक पूँजी तो होता नहीं, इन कारण बैंक समितियों को श्रृणु देने का ही कार्य अधिक करते हैं। से-ट्रल बैंक व्यक्तियों, विशेष प्रकार की समितियों, तथा कृषि सहकारी समितियों का, नोट अथवा बॉण्ड पर, श्रृणु दे देते हैं। किन्तु वाक्त्यों और विशेष प्रकार का समितियों से इसका अतिरिक्त कुछ जामदाद अथवा सम्पत्ति गिरवी रखवाई जाती है। कृषि सहकारी समितियों के अपरिमित दायित्व के कारण उनका 'प्रोनोट' ही यथेष्ट जमानत समझी जाती है। अब सहकारी साल समिति किसी सदस्य के पुराने श्रृणु को चुकाने के लिए लम्बा श्रृणु लेती है तो से-ट्रल बैंक 'प्रोनोट' के अतिरिक्त उन कागज़ों को, जो सदस्य ने समिति को लिख दिये हैं, अपने नाम करवा लेता है।

यह जानने के लिए कि प्रत्येक सहकारी साल समिति को अधिक से अधिक कितना श्रृणु देना उचित होगा, से-ट्रल बैंक अपने से सम्बन्धित साल समितियों की साल का अनुमान लगाते हैं। जो श्रृणु

समितियों को दिया जाता है वह निश्चित धर्मों में वसुध का लिया जाता है। कुछ प्रांतों में तो श्रृणु बहुत समय के लिए भी दिया जाता है, किन्तु कुछ में केवल कम समय के लिए ही। श्रृणु का स्वाकृति देने में बहुत सी कानूनी कायबाही करनी पड़ती है, इसलिये श्रृणु मिलने में देर हो जाती है। हम दाय को दूर करने के लिए कुछ सेट्टल बक एक रकम निश्चित कर देते हैं, जिस तक समितियों का बिना किसी देरी के कर्ज द दिया जाता है अधिक रकम के लिए नियमित कायबाही करनी पड़ता है। कुछ प्रांतों में समितियों को सामान्य साल निधारित कर दी जाता है। ऐसा करने से पूर्व, उनसे सदस्यों का नामों व साल का लेखा तैयार किया जाता है, जिसमें सदस्यों का सम्पत्ति, उनकी आवश्यकता, उनकी आयु तथा उनकी बचान की शक्ति का उपोस रहता है। हम लम्बे के आधार पर बैंक यह निश्चित कर देता है कि समिति को किन्ते रकम तक कर्ज दिया जा सकता है। सदस्यों की सामान्य साल का लेखा प्रतिवर्ष होनेवाले के अनुसार तैयार किया जाता है।

सेट्टल बैंक भिन्न भिन्न प्रांतों में लुदा-नुदा समय के लिए कर्ज देते हैं। उनका ठारन करने के लिए जो कर्ज लिया जाता है वह एक दो वर्ष के लिए होता है, और जो श्रृणु भूमि में सुधारने के लिए, अथवा पुराने कर्मों को अदा करने के लिए लिया जाता है, वह पाँच से दस वर्ष तक के लिये दिया जाता है। प्रत्येक प्रांत में यह धारणा जोर पकड़ रही है कि सेट्टल बैंक अधिक समय के लिए श्रृणु नहीं दे सकते। इसलिये भूमि व चक बैंक स्थापित करना चाहिये।

सेट्टल बैंक अभी तक कमितियों में से १२ प्रतिशत सुद लेते रहते हैं। जब बाजार में सुद की दर बहुत घट गई तब इन बैंकों ने दर घटाई, और अब प्रमाण किया जा रहा है कि सुद की दर और घटाई जाये। भारतीय सहकारिता आन्दोलन की मज्जे बड़ी कमी पर है कि

समितियों श्रृणु को उचित समय पर नहीं दे पाती और बहुत सा रुपया बाकी रह जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि सदस्य अशिक्षित हैं, उ हें ज्ञान नहीं है, कभी कभी फल नष्ट हो जाने के कारण भी वे कज़ अदा नहीं कर पाते। यदि फल नष्ट हो जाने से समितियाँ अपना श्रृणु नहीं दे पाती तो उ हें अधिक समय दे दिया जाता है। जब कोई समिति अपना श्रृणु नहीं देती तो बैंक, जहाँ तक हो सकता है, रुपया वसूल करता है। यदि रुपया किसी भी प्रकार वसूल नहीं होता तो बैंक रजिस्ट्रार से समिति तोड़ देने के लिए कहना है, अथवा अदालत से डिगरी कराता है।

जब समितियाँ सेट्रल बैंक को श्रृणु का रुपया चुकाती हैं, उस समय बैङ्क के पास आवश्यकता से अधिक रुपया जमा हो जाता है। यह स्थिति वर्ष में दो से चार महीन तक रहती है। इस समय बैङ्क प्रान्तीय बैङ्कों में रुपया जमा कर देते हैं, जहाँ प्रान्तीय बैंक नहीं है, वहाँ रुपया इम्पीरियल बैंक में जमा कर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक बैङ्क के पास कुछ रुपया स्थाई रूप में अधिक होता है, जो समितियों को श्रृणु देने में नहीं लगाया जा सकता। यह कोष प्रान्तीय बैंक में आधक समय के लिए जमा कर दिया जाता है, अथवा ट्रस्ट-सिक्कुरिटी में लगा दिया जाता है। इस समय सेट्रल बैंकों की नीति यह है कि वे आवश्यकता से अधिक डिपॉजिट नहीं लेना चाहते, इस लिए डिपॉजिट पर सूद की दर बहुत घटा दी गई है।

नक़दी—मैकलगेन कमेटी ने प्रत्येक सेट्रल बैङ्क द्वारा नक़दी रखे जाने की आवश्यकता बतलाई है। किसी समय ऐसा सम्भव है कि डिपॉजिट निकाल लो जावें और लोग रुपया न जमा करें। ऐसे समय पर जमा करनेवालों को उनका रुपया दे सकने के लिए यह आवश्यक है कि प्रत्येक सेट्रल बैङ्क कुछ-न कुछ नक़दी अवश्य रखे। मैकलगेन कमेटी ने इस विषय में निम्नलिखित सम्मति दी है—जिन बैंकों में

बालू खाता तथा सेविङ्ग बैंक खाता दोनों ही हों, उनमें चालू खाते की गारा रकम तथा सेविङ्ग बैंक खाते की ७५ प्रतिशत रकम नकदी तथा रेसा डिस्कूरिटी में रखना चाहिए, जो तुरन्त ही नकदी में परिणत की जा सके। मुद्रती जमा के लिये कमेटी का यह राय है कि जो डिपॉजिट प्रगल बारह महीनों में देनी हो उसकी आधा रकम नकदी में रहे। किन्तु इस नियम के अनुसार कहीं काय नहीं होता, प्रत्येक प्रान्त न अपने नियम बना रखे है। प्रायः नकदी इससे कम ही रहती है।

लाभ—सेंट्रल बैंक प्रतिवर्ष वाषििक लाभ का २५ प्रतिशत रक्षित कोष में जमा करते हैं और शेष हिस्मदारों में बाँट दिया जा सकता है, किन्तु सेंट्रल बैंक के उपनियमों में अधिक न अधिक लाभ की दर निश्चित कर दी जाती है, जिसमें वाषििक लाभ हिस्मदारों में नहीं बाँटा जा सकता।

सेंट्रल बैंक ६ प्रतिशत से १० प्रतिशत तक लाभ बाँटते हैं, अधिकतर प्रान्तों में ६ प्रतिशत ही बाँटा जाता है। सारण रक्षित कोष के अतिरिक्त कोर कोई सेंट्रल बैंक इमारत, बहाम्बात, तथा लाभ-हानि-सन्तुलन के लिये विशेष कोष जमा करते हैं। रक्षित काय का इयदा डिस्कूरिटी में या प्रान्तीय बैंक में लगा दिया जाता है, अथवा वह बैंक में ही रहता है और कायगोज़ पूर्णों को वृद्धि करता है।

सूद की दर—सेंट्रल बैंक की सूद की दर मिश्र भेद्य प्रान्तों में जुदा-जुदा है। किन्तु डिपॉजिट के सूद तथा प्रारम्भिक समितियों के लिए मानवाली सूद में, २ से ५ प्रतिशत का अन्तर रहता है। बिहार, उड़ीसा, छत्तीसगढ़ तथा मजालिषर में यह अन्तर ४ से ५ प्रतिशत तक होता है। अथ प्रान्तों में अंतर कबल दो या तीन प्रतिशत है। जिन बैंकों का समन्ध कम होता है, उनका प्रबन्ध इयव अपवाकृत अधिक हानि के कारण उन्हें अन्तर अधिक रखना पड़ता है। कुछ प्रान्तों में विशय प्रकार का 'लैंड टैरा' (मृम स्वत्व) होने के कारण

रूपया अधिक माग जाता है, इस कारण भी अन्तर अधिक रखना पड़ता है।

कर्मचारी—सेट्रल बैंक अपने से संबंधित समितियों को देखभाल रखते हैं, तथा उन पर अपना नियंत्रण रखते हैं। इस कार्य के लिए उ है कुछ कमचारी रखन पड़ते हैं। कर्मचारी श्रृंख के प्राथनापत्रों की जाँच करते हैं और सम्पत्ति का लेखा तैयार करते हैं जो समितियाँ अपने पुराने श्रृंख को चुकाने के लिए अधिक समय माँगती हैं, उनक प्राथनापत्रों के विषय में भी जाँच करते हैं और समिति के सदस्यों से रूपया वसूल करने में, सहायक होते हैं। कहीं कहीं सेट्रल बैंक के कमचारी ही सदस्यों से रूपया वसूल कर लेते हैं। ऐसी परिस्थिति में सदस्य समिति को कुछ नहीं समझता और समिति का कोई प्रभाव नहीं रहता। किसी किसी प्रांत में ये कमचारी समितियों का हिसाब रखते हैं, तथा वार्षिक सभा का आयोजन भी करते हैं। जहाँ नई समितियों की स्थापना करने के लिये सहकारी विभाग विशेष कमचारी नियुक्त नहीं करता, वहाँ ये कर्मचारी नवीन समितियों की स्थापना भी करते हैं। इसके अतिरिक्त ये लोग सहकारिता सम्बन्धी प्रचार कार्य भी करते हैं। किन्तु अब इनमें से कुछ कार्य प्रांतीय इस्टिब्लिशमेंट करने लगी है। कुछ प्रांतों में समितियों की देखभाल का कार्य सुपरवाइजिङ्ग यूनियन को दिया गया है।

सेट्रल बैंकों की आय-व्यय की जाँच सरकार द्वारा नियुक्त आय-व्यय परीक्षक करते हैं। ये परीक्षक वसूल न हुए रुपये के विषय में भी जाँच करते हैं तथा सेट्रल बैंकों की आर्थिक स्थिति को भी देखते हैं। रजिस्ट्रार कुछ प्रश्न निश्चित करता है, जिनका उत्तर तथा आय-व्यय परीक्षक की रिपोर्ट रजिस्ट्रार के पास जाती है।

सेट्रल बैंक का निराक्षण रजिस्ट्रार तथा सहकारी विभाग के कमचारी करते हैं। जहाँ प्रांतीय बैंक हैं, वहाँ उनक मेनजर तथा कायरेंडर भी

निरीक्षण करत है। किंतु यह भवमाय है कि निरीक्षण उचित रूप से नहीं होता, क्योंकि रजिस्ट्रार तथा उनके कमचारों कुछ हा बैंकों का निरीक्षण कर पाते हैं। प्रत्येक बैंक वार्षिक बैलेंस-शीट (लेनी दनी का सलाह) तैयार करके उसे आय-व्यय-वर्गीकरण की रिपोर्ट के सहित रजिस्ट्रार तथा हिस्मंगरों के पास प्रस्तुत है। बैलेंस-शीट के अतिरिक्त प्रत्येक बैंक को लाभ और हानि का, तथा आयदनी और खर्च का ब्यारा भी सरकार के पास भेजना पड़ता है। सेंट्रल बैंक रजिस्ट्रार को तिमाही रिपोर्ट भेजते हैं, जिसमें उनकी वार्षिक स्थिति का बोधा रहता है। प्रायः सेंट्रल बैंक अपनी शालाएँ नहीं खोलते, किंतु उन सेंट्रल बैंकों को, जिनका क्षेत्र बहुत बड़ा है, जिनसे सम्बंधित समितियों का सदस्य अधिक है, शालाएँ खोलने की आज्ञा दे दी गई है।

बैंकों की स्थिति—भारतवर्ष में सब मिलाकर छ सेंट्रल बैंक हैं—पंजाब १२०, बंगाल ११७, सयुक्तप्रान्त ७०, बिहार उड़ीसा ६८, मध्यप्रान्त ३५, महाराष्ट्र १० आसाम २०, बम्बई ११ शेष देशी राज्यों में हैं। सब सेंट्रल बैंकों के लगभग ८०,००० व्यक्ति और १,४०,००० समितियाँ सदस्य हैं। समस्त कार्यशालाएँ ७६ करोड़ रुपये से अधिक हैं जिनमें हिस्सा पूँजी ६ प्रतिशत, रक्षित कोष १४ प्रतिशत, विपार्जित ५६ प्रतिशत, प्रान्तीय बैंक से लिया हुआ श्रुण १४ प्रतिशत, तथा सरकार से लिया हुआ श्रुण सेवक प्रतिशत है। इन आंकड़ों की देखन से शायद जाता है कि सेंट्रल बैंकों के पास २३ प्रतिशत के लगभग उनका निष्पन्न का पूँजा है। परन्तु रक्षित कोष इनकी ठीक स्थिति को नहीं बतलाता, क्योंकि बहुत सा साख्त समितियाँ, जो इन बैंकों से रुपया उधार लेती हैं, वे अपना श्रुण अदा नहीं करती, और यह हानि बैंकों को उठानी पड़ेगी।

मदरास, बम्बई और मध्यप्रान्त-बंगाल के सेंट्रल बैंकों का क्षेत्र विस्तृत

है। अधिकतर एक जिले में एक बैङ्क है। परन्तु बङ्गाल, बिहार, उड़ीसा और पंजाब में एक बहुत छोटे क्षेत्र (ताल्लुका) में एक बैङ्क होता है। संयुक्तप्रान्त के कुछ जिलों में तो प्रत्येक तहसील में एक बैङ्क है, और कुछ में केवल एक एक ही बैङ्क काय करना है।

आंकड़ों से यह भी श्रात होता है कि सेन्ट्रल बैंक उधार पूँजी (डिपॉजिट और कज की रकम) का ६० प्रतिशत समितियों को उधार दे देते हैं। इस से यह निश्चित होता है कि सेन्ट्रल बैङ्क अपेक्षाकृत कम नफ़्ता रखते हैं, वह व्यापारिक दृष्टि से ठाक नहीं है। यद्यपि वसूल न होनवाला ऋण क आकड़े ग़लत नहीं हैं परन्तु यह निश्चित है कि सेन्ट्रल बैंकों का बहुत सा रुपया मारा जावेगा, क्योंकि साख समितियों की स्थिति ठीक नहीं है।

मोटे तौर पर मद्रास, बम्बई और पंजाब के सेन्ट्रल बैंकों की आर्थिक स्थिति अच्छी है। बिहार, बंगाल, उड़ीसा, मध्यप्रान्त और बरार के सेन्ट्रल बैंकों की स्थिति अत्यन्त चिन्ताजनक हो गई थी, उनमें जीर्णोद्धार का प्रयत्न किया गया। इन प्रान्तों में बहुत से बैंकों को तो अपना कारोबार इस लिए बन्द कर देना पड़ा कि वे डिपॉजिट करन वालों को उनका रुपया देन में असमर्थ थे। उत्तरीय उड़ीसा के सेन्ट्रल बैङ्कों ने अपना प्रबंध ६ मघ के लिए रजिस्ट्रार के हाथ में सौंप दिया। इन प्रान्तों में सेन्ट्रल बैङ्कों की असफलता के मुख्य कारण ये हैं — समितियों की अंधाधुंध ऋण देना, दोषपूर्ण निरीक्षण, बैंकग सिद्धान्तों की अवहेलना, और प्रारम्भिक समितियों का दोषपूर्ण संगठन। अन्य प्रान्तों में सेन्ट्रल बैङ्कों की स्थिति साधारण है।

आठवाँ परिच्छेद

प्रान्तीय सहकारी बैंक या सर्वोपरि बैंक

—०—

प्रान्तीय बैंकों की आवश्यकता—दश में सहकारिता आन्दोलन व क्रमशः फैलने पर यह अनुभव होने लगा कि यद्यपि सेट्रल बैंक सहकारी समितियों का निरीक्षण तथा देखभाल करने में रजिस्ट्रार का हाथ बैठात है। तथापि आन्दोलन में जितनी पूँजी की आवश्यकता होता है, उसका उचित प्रबंध नहीं कर सकत। इनके अतिरिक्त सेट्रल बैंकों का नियंत्रण तथा उनका द्वारा मान्य समितियों की यथेष्ट पूँजी का उचित प्रबंध करने का भी आवश्यकता प्रतीत हुई। मैकलगन कमेटी ने, जो १९१५ में सहकारिता आन्दोलन का जाँच के लिए बैठाई गई था, प्रत्येक प्रांत में प्रान्तीय बैंक स्थापित करने की आवश्यकता बतलाई। वास्तव में सेट्रल बैंकों का आगमन में सम्भव स्थापित करने के लिए ऐसी सस्था की अत्यंत आवश्यकता थी। प्रान्तीय बैंकों में पूँजी यह काम रजिस्ट्रार करता था। यदि किन्ना सेट्रल बैंक का पूँजी की अधिक आवश्यकता होती तो रजिस्ट्रार सूचना पान पर प्रांत के प्रत्येक सेट्रल बैंक का गश्त विट्टी निम्न देता था। पर इससे उद्देश्य निश्च नहीं होता था और नाथ ही रजिस्ट्रार का बहुत ना समय इन कार्य में लग जाता था। कुछ सेट्रल बैंक अपनी आवश्यकता से अधिक पूँजी आकर्षित कर लेत थे, और कुछ को यथेष्ट पूँजी नहीं मिलता थी इसलिए ऐसी प्रान्तीय बैंकों का बहुत आवश्यकता प्रतीत हुई जो पदन प्रकार के बैंकों की अतिरिक्त पूँजी जमा करें और उसे दूसरे प्रकार के बैंकों को दे दें। इसके अतिरिक्त द्रव्य-बाजार (मनी-मार्केट) तथा

सहकारिता आन्दोलन के बीच में मजबूत स्थापित करने के लिए प्रांतीय बैंकों की आवश्यकता प्रतीत हुई ।

भारतवर्ष में इन समय नौ प्रांतीय सहकारी बैंक कार्य कर रहे हैं — मद्रास, बम्बई, बिज, पञ्जाब, बङ्गाल, बिहार, मध्यप्रान्त वाराणसी और असम सहित । देशी राज्यों में हैदराबाद तथा मैसूर के सर्वोपरि बैंक प्रांतीय सहकारी बैंकों की श्रेणी में आते हैं । इन राज्यों में बैंकों की समस्त कार्यशाला पूँजी १८ करोड़ रुपये से अधिक है । इन्डोर, भावनगर, गवालियर, बड़ोदा, कश्मीर और भोपाल में कोई सेन्ट्रल बैंक इस कार्य के लिए चुन लिया गया है, वह सर्वोपरि बैंक का काम करता है ।

सदस्यता—इन बैंकों का संगठन एकसा नहीं है और न इन सब बैंकों में सदस्यता ही एकसा है । पञ्जाब और बंगाल को छोड़कर और सब प्रांतों में व्यक्ति भा इन बैंकों के सदस्य होते हैं । बंगाल और पञ्जाब में व्यक्ति इन बैंकों के हिस्सेदार नहीं हो सकते, वहाँ सहकारी साख्त समितियाँ और सहकारी सेन्ट्रल बैंक ही प्रांतीय बैंक के सदस्य हो सकते हैं । बम्बई, पञ्जाब, बिहार, मध्यप्रान्त-वाराणसी और असम में प्रांतीय बैंकों के सदस्य व्यक्तियों के अतिरिक्त प्रारम्भिक सहकारी समितियाँ और सहकारी सेन्ट्रल बैंक होते हैं । मद्रास प्रांतीय सहकारी बैंक के सदस्य केवल सेन्ट्रल बैंक ही हो सकते हैं, प्रारम्भिक साख्त समितियाँ नहीं हो सकती । बङ्गाल और बिहार में यद्यपि कुछ प्रारम्भिक सहकारी साख्त समितियाँ सदस्य हैं, पर तु व्यवहार में वहाँ भी सेन्ट्रल बैंक ही उनके सदस्य हैं । बिज में कोई सेन्ट्रल बैंक नहीं है, इसलिये वहाँ के प्रांतीय बैंक के सदस्य केवल व्यक्ति तथा प्रारम्भिक सहकारी साख्त समितियाँ ही हैं । इन मिश्रित साख्त सदस्यता के कारण माधवारण सभाओं की बैठक करना तथा उसमें वोट देन की पद्धति का निश्चय करने में बड़ी उलझन होती है । यही कारण है कि मद्रास सहकारिता कमेटी (१९४०)

ने व्यक्तियों को सदस्य न रखने की निषेधिका का ।

संचालन—प्रांतीय बैंकों को भव्य मौति चलाने के लिये व्यापारिक बुद्धि तथा बैंकिंग की योग्यता चाहिये । इसलिये बैंक के डायरेक्टरों या संचालकों में इन गुणों वाला व्यक्ति भी होने चाहिये । किंतु संचालक-बोर्ड में इन्हें प्रधानता देने से सम्भव है कि सहकारिता के हितों की रक्षा न हो । इसलिये डायरेक्टरों में प्रधानता तो सहकारितावादियों की ही रहनी चाहिये, किंतु कुछ ऐसे व्यापारी तथा बैंकिंग की योग्यता रखनेवालों को भी लालना चाहिये, जिन्हें सहकारिता आन्दोलन में सहानुभूति हो । यह तो रही निदान्त की बात, अब देखना यह है कि हमारे प्रांतीय बैंकों का संचालन कैसा होता है ।

भिन्न भिन्न बैंकों के संचालक बोर्ड का निर्माण उनके अपने-अपने उपनियमों के द्वारा होता है । दो या तीन के अनिश्चित और सब प्रांतीय बैंकों में हिस्सेदारों के बाहर से भी डायरेक्टरों को नियुक्त करने की परियाय प्रचलित है । पञ्जाब में सहकारिता विभाग का रजिस्ट्रार तथा सहकारिता विभाग का आर्थिक सहायक पटन (अपने पद के कारण) डायरेक्टर होते हैं । बंगाल में रजिस्ट्रार बोर्ड में तीन व्यक्तियों को मनोनात करता है । मध्यप्रान्त-प्रदेश के प्रांतीय बैंक के बोर्ड में रजिस्ट्रार तथा प्रांतीय सरकार का फाइनेंस सेक्रेटरी पटन डायरेक्टर होते हैं । बिहार में रजिस्ट्रार डायरेक्टर होता है । वहीं सहकारिता आन्दोलन के पुनर्निर्माण में बैंक प्रांतीय सरकार के नियंत्रण में दे दिया गया है । प्रांतीय सरकार जिसे प्रांतीय सहकारी बैंक का सहायक नियुक्त करेगी, वही उसका (उस समय तक के लिये) सब तक कि बैंक सरकार के नियंत्रण में रहेगा) मेनजिग डायरेक्टर होगा । सिंध प्रांतीय बैंक में भी मनोनात डायरेक्टर होता है । मद्रास, बम्बई और सम्भवतः आसाम में मनोनात डायरेक्टर नहीं होते । मद्रास में रजिस्ट्रार को पटन प्रांतीय बैंक का डायरेक्टर बनाने का प्रयत्न हो

रहा है।

नयुक्तप्रान्त में प्रातीय सहकारी बैंक सन् १९४४ में, लखनऊ में स्थापित किया गया था। सरकार ने इसे तीन वर्ष तक पंद्रह हजार रुपये की सहायता दी। बैंक के सदस्य व्यक्ति और सहकारी समितियाँ दोनों ही हैं। रजिस्ट्रार अपने पद के कारण इसका चेयरमेन होता है। डायरेक्टरी में से दा को सरकार नियुक्त करती है, दो व्यक्तिगत हिस्से दारों के, और पाँच सहकारी समितियों के होते हैं। बैंक की कार्यालय पूँजी पचास लाख रुपये है। इसने अपनी शाखाएँ बाराबंकी, कानपुर और सोतापुर में स्थापित की हैं मविष्य में इन्हें और बतान का विचार है।

कार्यशील पूँजी—प्रातीय बैंकों की कार्यशील पूँजी लगभग १३ करोड़ रुपये है, जिसमें लगभग १६ प्रतिशत उनकी निज की, और शेष उधार ली हुई है। उधार ली हुई पूँजी में सहकारी समितियों, सन्तुलन बैंकों तथा व्यक्तियों की डिपॉजिट मुख्य हैं। प्रान्तीय बैंक चालू, सेविंग्स और मुहृती तीनों तरह की डिपॉजिट लेते हैं। अधिकांश डिपॉजिट एक से तीन वर्ष के लिए ली जाती है। इससे अधिक समय के लिए डिपॉजिट बहुत कम ली जाती है। जो बैंक इससे अधिक समय के लिए डिपॉजिट लेते थे, उन्हें अब कठिनाई का अनुभव हो रहा है, क्योंकि पिछले वर्षों में सूद की दर तंत्री से घटती गई है। प्रान्तीय सार्व अस्थी है, वे मदकारिता आन्दोलन और बाहर से भी डिपॉजिट आकर्षित करते हैं। जहाँ तक सूद देन का प्रश्न है, वे अन्य -वापारिक बैंकों की अपेक्षा बहुत अधिक सूद नहीं देते। मद्रास प्रान्तीय बैंक चालू खाते पर पौन प्रतिशत एक वर्ष की मुहृती जमा पर द्वाइ प्रतिशत तथा दो वर्ष की जमा पर पौन तीन प्रतिशत सूद देता है, उनको यथेष्ट डिपॉजिट मिल जाती है। पञ्जाब प्रा तीय बैंक व्यक्तियों को चालू खाते पर कोई सूद नहीं देता। द्रव्य बाजार के अनुसार यह बैंक भी अपनी

सूद की दर निर्धारित करते हैं।

पूँजी लगाना—रिजर्व बैंक ने प्रांतीय सहकारी बैंक में यह दोष बताया है कि वे नकदा रुपया और शाग्र भँज सकनवाली लेनी यथेष्ट नहीं रखत और आवश्यकता से अधिक रुपया बाहर लगा देते हैं। उसन प्रांतीय बैंकों की राय दा थी कि व अपनी दना की ४० प्रतिशत नकदी अथ वैक्यू में जमा कर रखें। भिन्नभिन्न प्रांतीय सरकारों ने भी कुछ नियम बना दिये हैं, जिसके अनुसार प्रांतीय बैंकों का अपनी दना के एक निश्चित अनुपात में नकदा तथा शाग्र भँज सकनवाली लेना रखनी पड़ती है। प्रांतीय बैंक व्यवहार में २० से ५० प्रतिशत कायशाल पूँजी सरकारों सिक्यूरिटी में लगात हैं, कुछ रुपया अन्य व्यापारिक बैंकों तथा प्रांतीय बैंकों में जमा करते हैं, कुछ नकदी अपने पास रखत हैं, और शेष अपने सदस्यों को उधार देत हैं।

जहाँ तक रुपया लगान का प्रश्न है, रिजर्व बैंक का दोषारोपण उचित नहीं मालूम होना। रिजर्व बैंक ने प्रांतीय बैंकों को यह सलाह दी थी कि उन्हें अपने सदस्यों की ६ महीन से एक वर्ष तक के लिए ही श्रृण देना चाहिए। यद्यपि रिजर्व बैंक का इस सलाह को प्रांतीय सहकारी बैंक पूरी तरह से नहीं मान सक, फिर भी वे अब प्रायः उत्पादन और खेती का पैदावार के न्यून-विक्रय के लिये ही, याड़े समय के लिए, श्रृण देत हैं। बङ्गाल प्रांतीय बैंक तो पसलों की उत्पन्न करने के लिए बचन कम समय के ही श्रृण देन लगा है। परन्तु किसान की साल की जितनी आवश्यकता कम समय के लिये है, उनको ॥ मध्यम समय यात्रा दो या तीन वर्षों के लिये भी है, अतएव प्रांतीय सहकारी बैंकों को ये दानों उधार की सान्ध दना होना है। यदि प्रांतीय सहकारी बैंक अपनी निम्न पूँजी का ध्यान रखन के भाव, डिवाइडेंडो तथा श्रृण के समय का ध्यान रखें तो वे आसानी से कम समय और मध्यम समय के लिए सान्ध का प्रबंध कर सकत हैं। हाँ, लम्बे समय

प्रयात् १० से २० वर्ष तक क लिये वे साख नहीं दे सकते, उसने लिये भूमि बन्धक बैंक ही उपयुक्त संस्था है ।

सदस्यों को कज दन क सम्बन्ध में भी सब प्रातीय बैंक एकसा व्यवहार नहीं करते । बम्बई प्रातीय बैंक मुख्यतः प्रारम्भिक सहकारी साख समितियों को, अपनी शान्वाओ के द्वारा, कर्ज देता है, केवल सेट्टल बैंको से कज लेता है । जहाँ तक सेट्टल बैंको का प्रश्न है, प्रान्तीय बैंक सन्तुलन-केन्द्र है और उ हें समय पड़ने पर ओवरड्राफ्ट (जमा से अधिक निकालने की स्वीकृति) इत्यादि देता है । अब कुछ समय स प्रातीय बैंक 'बी' श्रेणी के सदस्यों को भी कज देने लगा है । यह कर्ज लेनेवाले उन साख समितियों के सदस्यों में से होते हैं, जो प्रातीय बैंक से सम्बन्धित हैं, और वे अपनी पैदावार की जमानत पर श्रृण लेते हैं । बम्बई प्रान्तीय बैंक औद्योगिक सहकारी साख समितियों को भी उनके तैयार माल या कच्चे माल की जमानत पर कज देता है । मदरास बैंक केवल सेट्टल बैंको से ही कारोबार करता है, वह प्रारम्भिक समितियों से कोई मतलब नहीं रखता । लेकिन वहाँ भी सदस्यों एवं गैर सदस्यों को सरकारी सिक्यूरिटी, रिजर्व बैङ्क और इम्पीरियल बैङ्क के हिस्सों तथा मदरास प्राताय सहकारी बैङ्क में उनकी डिपॉजिट की जमानत पर श्रृण देने की सुविधा कर दी गई है । पञ्जाब प्रातीय बैंक व्यक्तियों को केवल बैङ्क में जमा की हुई उनकी डिपॉजिट की जमानत पर श्रृण देता है । सिंध में कोई सेट्टल बैंक न होने स, प्रातीय बैंक सीधे सहकारी साख समितियों को ही श्रृण देता है । यद्यपि पञ्जाब, बिहार, मध्यप्रान्त वरार व प्रातीय बैङ्को क सदस्य से ट्टल बैंक और प्रारम्भिक समितियाँ दोनों ही हैं, वे श्रृण से ट्टल बैंको को ही देते हैं ।

प्रातीय बैंको की आर्थिक मजबूती उनके दिये हुये श्रृण की जमानत पर निर्भर है, और उस जमानत की मजबूती अ त में इस बात पर निर्भर है कि जो रुपया किसान को समितियों द्वारा दिया गया है,

वह वसूल किया जा सकता है या नहीं। प्रारम्भिक साल समितियों को अपने दिये रुपये को वसूल करने की योग्यता श्रृणु लेनेवाले सदस्य को श्रृणु अदा करने की योग्यता तथा अथ बहुत ज़रूरतों पर निर्भर है। इनमें से कुछ तो निश्चित हैं। कुछ का नियंत्रण हो सकता है और कुछ का नशा हो सकता है, कुछ प्रकृति पर निर्भर है तो कुछ मनुष्यों का इच्छा पर। इन विविध कारणों से हमारे अधिकार सामान्यो का कारखाना घाटे का है। जितना व्यय होता है उससे कम आय होती है। सहकारी समितियों के कुछ सदस्य तो ऐसे हैं, जिनका काम बिना श्रृणु लिए चल ही नहीं सकता। बहुत से ही निर्धनता से श्रृणु होने का प्रधान कारण है। बहुत से ईमानदार सदस्य या अपनी श्रृणु नहीं चुका पाते, क्योंकि वे नितांत असमर्थ हैं। यही सहकारी साम्य आन्दोलन का नियन्त्रण है।

प्रांतीय बैंकों का लगभग कहा दिया है, जो सहकारी साम्य समितियों को है। श्रृणु बहुत समय हो गया, चुकाये नहीं गये, ऐसे कज का रकम बढ़ती जा रही है जो वसूल नहीं हो सकेंगे, और जो ज़मानत कज के लिये दी गई थी, प्रांतीय बैंकों को ठीके ज़मानत करना पड़ रहा है। इस जगह कुछ कम क्यादा यही स्थिति है। बरार में तो प्रांतीय बैंक के पास कज की वसूला के एवज़ में भूमि आगई है, जिसके स्वरोदधार नहीं मिलते। बरार, बङ्गाल और बिहार में साम्य सहकारी समितियों की लानी (जमानत) को ज़मानत करने का आन्दोलन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है। यहाँ आन्दोलन के पुनर्निर्माण का कार्य चल रहा है। ग्रामों में स्थिति बहुत बुरा है, यहाँ के श्रिष्टार ने भी आन्दोलन के पुनर्निर्माण की आवश्यकता बतलाई है। मुद्र से उत्पन्न हुई परिस्थिति में खेतों की पैदावार का मूल्य बेहद बढ़ गया है और किसान पर कज का बोझ कुछ हल्का हो गया है। ऐसी दशा में स्थिति के सुधन जाने की पूर्ण आशा है।

भारतीय सहकारिता आ दोन

इस सम्बन्ध में एक बात महत्वपूर्ण है, जिसको हमें भूल न जाना चाहिए। विशेष कर बम्बई और पंजाब में, जिन प्रांतीय बैंकों ने लम्बे समय के लिये श्रृणु देन का प्रयत्न किया और इस अभिप्राय से भूमि-बचक बैंकों का श्रृणु देन के लिये द्विवेधर छे बेचे, वे कठिनाई में पड़ गये। पंजाब और आसाम में प्रांतीय बैंक ही पारम्भिक भूमि बचक बैंकों को कज देते थे कि तु अब वहाँ भूमि बचक बैंक काम नहीं करते, इसलिए प्रांतीय बैंकों को लम्बे समय के लिए कज देन का प्रश्न हा नहीं उठता। मद्रास में एक सेन्ट्रल भूमि बचक बैंक है जो प्रांत भर के सभी भूमि बचक बैंकों को कज देता है, वहाँ प्रांतीय सहकारी बैंक को इस लिए एक पृथक् विभाग रखन की आवश्यकता नहीं पड़ा। मध्यप्रान्त वरार का प्रांतीय सहकारी बैंक भूमि बचक बैंकों को भी कज देता है, इस कारण उसमें एक अलग विभाग हम कार्य के लिए स्थापित कर दिया गया है। बंगाल में प्रांतीय सहकारी बैंक सरकार की गारंटी पर हा भूमि बचक बैंकों को कज देना चाहता है।

प्रान्तीय बैंक और सेन्ट्रल बैंक का सम्बन्ध—प्रांतीय सहकारी बैंकों तथा सेन्ट्रल बैंकों का सम्बन्ध। भल भल प्रांतों में जुदा जुदा है। वे सेन्ट्रल बैंकों पर कोई नियंत्रण नहीं रखते। सेन्ट्रल बैंक अपना स्वयं प्राय प्रांतीय बैंकों में अववा सुट व्यापारिक बैंकों में जमा कर देते हैं। मद्रास प्रांत में सेन्ट्रल बैंक अपना सारा रक्षित कोष प्रांतीय सहकारी बैंक में रखते हैं। बम्बई में प्रांतीय बैंक सहकारी सस्थाओं का मुहती जमा पर व्यक्तियों से अधिक सुट देता है। वहाँ प्रांतीय बैंक के नेतृत्व में बम्बई सहकारी बैंक एलासियेशन स्थापन है, जो सेन्ट्रल

*द्विवेधर वह श्रृणु पत्र है जो बैंक या कम्पनी लम्बे समय के लिए साधारण बनता से श्रृणु लेकर उन्हें दे देती है। श्रृणु पर निश्चित दर से सुट दिया जाता है।

बैंकों को सम्बद्ध करती है। मद्रास में प्रांतीय बैंक सेट्रल बैंकों का वार्षिक सम्मेलन करता है, जिसमें उन बैंकों की नीति और उनके सम्बन्धक प्रश्नों पर विचार होता है। मद्रास प्रांतीय बैंक न सम्बन्धित सेट्रल बैंकों का, अपने हायरैक्टरों द्वारा, निरीक्षण कराने का परिपाटी पहले ही स्थापित कर दी थी, किन्तु अब मद्रास सहकारिता कानून के अनुसार उनके कमचारी उन बैंकों का निरीक्षण कर सकेंगे। मध्यप्रांत में भी प्रांतीय बैंक अपने इन्स्पेक्टर द्वारा सम्बन्धित सेट्रल बैंकों का निरीक्षण कराता है।

उन सभी प्रांतों में जहाँ प्रांतीय बैंक स्थापित हैं, सेट्रल बैंक एक हमारे को सीधे काम नहीं दे सकते। वास्तव में प्रांतीय बैंकों का कार्य तो यह है कि वे सेट्रल बैंकों के अनुमन कर्तृ का काम करें, उन्हें गैरकानूनी, द्रव्य बाजार, कचरे, और सूद की दर नियंत्रित करने के सम्बन्ध में परामर्श दें। यद्यपि प्रांतीय बैंकों का सेट्रल बैंकों पर नियंत्रण वाञ्छनीय नहीं है, प्रांतीय बैंकों द्वारा उनका निरीक्षण आवश्यक है।

प्रान्तीय बैंक और सहकारिता विभाग—इन्होंने दिनों दिन प्रश्न को लेकर बहुत कुछ लोचानाती रही कि सहकारिता विभाग के रजिस्ट्रार का प्रांतीय बैंकों से क्या सम्बन्ध हो। कहीं कहीं रजिस्ट्रार द्वारा बहुत नियंत्रण और हस्तक्षेप होता है। इनमें बड़ी उत्पन्न पैदा हो जाती है। बङ्गाल, बिहार, और मध्यप्रान्त-बंगाल में इसका उदाहरण बालो का अधिष्ठातृ बन्या मारा गया क्योंकि प्रारम्भिक माल्य समितियों में काम चलू नहीं दिया जा सकना। वही यह प्रश्न उठाया गया कि यह रूपका सरकार दे, क्योंकि समितियों को यह बन्या सहकारिता विभाग की निरा रश पर दिया गया था, जो सरकार का एजेंट है। बंगाल में प्रांतीय बैंक जब (१९२८-२९) अपने डिपॉजिटरी का बन्या अदा नहीं कर सका तो वहाँ की सरकार को ३० लाख बन्या देना पड़ा। इसी प्रकार की स्थिति बङ्गाल में उत्पन्न हो गई, जब सहकारिता

भारतीय सहकारिता आन्दोलन

विभाग के रजिस्ट्रार ने प्रांतीय बैंक को जूट विक्रय समितियों को कूड़ा देने की सिफारिश की और वे समितियाँ रुपया अदा न कर सकीं। सरकार को २४ लाख रुपये, प्रांतीय बैंक की क्षतिपूर्ति के, देने पड़े। परन्तु बङ्गाल, बिहार तथा मध्यप्रांत वरार से सेट्रल बैंकों को जो भौषण हानि उठानी पड़ी उसे देना सरकार ने मंजूर नहीं किया। प्रांतीय बैंक व काय में रजिस्ट्रार या सहकारिता विभाग व अधिक दस्तक्षेप करने से केवल यही उलझन नहीं उत्पन्न होती, बरन् रजिस्ट्रारों के बदलते रहन और उनकी नीति भिन्न भिन्न होने के कारण प्रांतीय बैंक की नीति भी बदलती रहती है। अस्तु, आवश्यकता इस बात का है कि रजिस्ट्रार और उनका विभाग प्रांतीय बैंक को केवल अपनी राय और सलाह दे, वह बैंक का डायरेक्टर न हो। प्रांतीय बैंक श्रुण देन या न देन का निष्णय स्वयं करे।

प्रांतीय बैंक और रिजर्व बैंक—रिजर्व बैंक प्रांतीय बैंकों और उनसे सम्बंधित बैंकों को, सरकारी निक्षेपों की जमानत पर, नफ़ा सत्त्व देता है। परन्तु जहाँ तक सरकारी कागज़ को मुनान का प्रश्न है, प्रांतीय बैंक और सेट्रल बैंक जब रिजर्व बैंक की इच्छानुसार अपनी आर्थिक स्थिति तथा कारबार को बना लेंगे तभी वह उनका सहकारी कागज़ को मुनाने का सुविधा देगा। कुछ शर्तें पूरी करने पर, रिजर्व बैंक प्रांतीय बैंकों को अपना दरया एक प्रांत से दूसरे प्रांत में भेजने की सुविधा प्रदान करेगा। इन काय व लिए उनसे सेट्रल बैंकों को प्रांतीय बैंकों की शाला मान लिया है। कुछ प्रांतीय बैंकों व रिजर्व बैंक की योजना का स्वीकार कर लिया है और वे उनमें सम्मिलित हो गये हैं। रिजर्व बैंक न प्रांतीय बैंकों को अपना वेल्लेणशट (लानी दनी का लाना) एक निश्चित रूप में तैयार करने को कहा है और कुछ बैंक पैसा करने भी लगे हैं। जैसे जैसे प्रांतीय बैंक अपने कारोबार में, रिजर्व बैंक की इच्छानुसार मुधार करते जावेंगे, वैसे ही वैसे उनका

आपसी सम्बन्ध घनिष्ठ होना जावेगा। यद्यपि रिजर्व बैंक की स्थापना से सहकारी बैंकों को अभी तक व सब सुवधाएँ नहीं मिली हैं, जो वे चाहते थे, अब अखिल भारतवर्षीय सहकारी या सर्वोपरि बैंक की आवश्यकता नहीं रहा है।

आय व्यय परीक्षा—प्रांतीय बैंकों का हिसाब सहकारिता विभाग को जॉचना चाहिए, क्योंकि सहकारिता एक्ट व अनुसार रजिस्ट्रार का यह मुख्य कार्य है। परन्तु बहुत से प्रांतीय रजिस्ट्रारों ने यह हिसाब पेशवर आडिटर्स द्वारा जॉचवान की आशा दे दी है। किन्ता किसी प्रान्त में उनका द्वारा आडिट हो जाने पर प्रान्त का सहकारिता विभाग फिर आडिट करवाता है। आय-व्यय परीक्षा के अतिरिक्त इन बैंकों को अपनी आर्थिक स्थिति का तिमाही लखा, रजिस्ट्रार व द्वारा, प्रान्तीय सरकार को भेजना पड़ता है। प्रांतीय सरकार उन पर अपना मत प्रकट करती है।

अखिल भारतीय प्रान्तीय सहकारी बैंक एसोशियेशन—इस संस्था का जन्म मन् १९२६ में हुआ। इसका मुख्य कार्य यह है कि प्रत्येक सदस्य बैंक की कार्यशील पूँजी के आँकड़े सग्रह करे, और सब सदस्यों को सूचित करदे, जिससे किम बैंक की पूँजी की आवश्यकता है और कौन बैंक पूँजी दे सकता है, यह सब की बात हो जाय। सदस्य-बैंकों के आर्थिक प्रश्नों पर राय देना तथा उनकी सहायता करना, प्रान्तीय बैंकों की समय-समय पर का फ़ैस बुलाना, और उसमें प्रांतीय बैंकों तथा साख आ-दानेन व सम्बन्ध में महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करना भी इसा संस्था का कार्य है। अब कभी प्रांतीय बैंकों का सरकार या रिजर्व बैंक का ध्यान किसी विशेष बात की आर आकषित करना होता है तो यह संस्था उनसे लिखापट्टी करती है।

प्रांतीय बैंक सहकारी माल आ रोलन के सदस्यन वन्दन व अतिरिक्त वे मभा काम करते हैं, जो व्यापारिक बैंक करते हैं, नैम

विभाग के रजिस्ट्रार ने प्रांतीय बैंक को जूट विक्रय समितियों को कर्ज़ देने की विचारिश को और वे समितियाँ रुपया अदा न कर मकी। सरकार को २४ लाख रुपये, प्रांतीय बैंक को क्षतिपूर्ति क, देना पड़े। परन्तु बङ्गाल, बिहार तथा मध्यप्रान्त सरकार से सेट्टल बैंकों को जो भोवण हानि उठानी पड़ी उस देना सरकार न मजूर नहीं किया। प्रांतीय बैंक के कार्य में रजिस्ट्रार या सहकारिता विभाग २ अधिक हस्तक्षेप करने से केवल यही उलझन नहीं उत्पन्न होती, बरन् रजिस्ट्रारों के बदलते रहने और उनकी नीति भिन्न भिन्न होने के कारण प्रांतीय बैंक की नीति भी बदलती रहती है। अस्तु, आवश्यकता इस बात का है कि रजिस्ट्रार और उनका विभाग प्रांतीय बैंक को कबल अपनी राय और सलाह दे, वह बैंक का डायरेक्टर न हो। प्रांतीय बैंक श्रुण देना या न देना का निष्पत्ति स्वयं करे।

प्रांतीय बैंक और रिजर्व बैंक—रिजर्व बैंक प्रांतीय बैंकों और उनसे सम्बंधित बैंकों को, सरकारी निष्पूरिटी की ज़मानत पर, नकद सात्व देता है। परन्तु यहाँ तक सरकारी कागज़ को मुनान का प्रश्न है, प्रांतीय बैंक और सेट्टल बैंक जब रिजर्व बैंक की इच्छानुसार अपनी आर्थिक स्थिति तथा कारबार को बना लेंगे तभी वह उनसे सहकारी कागज़ को मुनान का सुविधा देगा। कुछ शर्तें पूरी करने पर, रिजर्व बैंक प्रांतीय बैंकों को अपना रुपया एक प्रांत से दूसरे प्रांत में भेजने की सुविधा प्रदान करेगा। इस बात के लिए उनसे सेट्टल बैंकों को प्रांतीय बैंकों की खाता मान लिया है। कुछ प्रांतीय बैंकों ने रिजर्व बैंक की योजना का स्वीकार कर लिया है और वे उसमें सम्मिलित हो गये हैं। रिजर्व बैंक ने प्रांतीय बैंकों को अपना बैलेमशॉट (लनी दनी का लवा) एक निश्चित रूप में तैयार करने को कहा है और कुछ बैंक देना करने भी लग हैं। जैसे जैसे प्रांतीय बैंक अपने काराबार में, रिजर्व बैंक की इच्छानुसार सुधार करते जावेंगे, वैसे ही वैसे उनका

एसी सम्बन्ध घनिष्ठ होना आवेगा। यद्यपि रिजर्व बैंक की स्थापना से सहकारी बैंकों को अभी तक वह सब सुविधाएँ नही मिली हैं, जो वे चाहते थे, अब अखिल भारतीय सहकारी या सर्वोपरि बैंक की आवश्यकता नहीं रहा है।

आय व्यय परीक्षा—प्रांतीय बैंकों का हिमाचल सहकारिता विभाग को जॉचना चाहिए, क्योंकि सहकारिता प्रकट व अनुसार रजिस्ट्रार का यह मुख्य कार्य है। परन्तु बहुत से प्रांतों के रजिस्ट्रारों ने यह दिशाव प्रेषण आडिटर्स द्वारा जॉचवान की आशा दे दी है। किसी किसी प्रांत में उनसे द्वारा आडिट हो जाने पर प्रान्त का सहकारिता विभाग फिर आडिट करवाता है। आय-व्यय परीक्षा के अतिरिक्त इन बैंकों को अपनी आर्थिक स्थिति का त्रिमासी लेखा, रजिस्ट्रार के द्वारा प्रांतीय सरकार को भेजना पड़ता है। प्रांतीय सरकार उस पर अपना मत प्रकट करती है।

अखिल भारतीय प्रान्तीय सहकारी बैंक एशोशियेशन—इस संस्था का जन्म मन् १९२६ में हुआ। इसका मुख्य कार्य यह है कि प्रत्येक सदस्य बैंक की कार्यशील पूँजी के आँकड़े सभ्र करे, और सब सदस्यों को सूचित करदे, जिससे किम बैंक की पूँजी की आवश्यकता है और कौन बैंक पूँजी दे सकता है, यह सब की बात हो जाय। सदस्य-बैंकों के आर्थिक प्रश्नों पर राय देना तथा उनकी सहायता करना, प्रान्तीय बैंकों की समय-समय पर कांफ्रेंस बुलाना, और उसमें प्रांतीय बैंकों तथा साख्त आन्दोलन के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करना भी इसा संस्था के कार्य हैं। जब कभी प्रांतीय बैंकों का सरकार या रिजर्व बैंक का ध्यान किसी विशेष बात का आर आकषित करना होता है तो यह संस्था उनसे लिखापत्रा करती है।

प्रान्तीय बैंक सहकारी साख्त आन्दोलन के सन्तुलन के द्वा राने के अतिरिक्त वे सभा कार्य करते हैं, जो व्यापारिक बैंक करते हैं, जैसे

हुन्दी पुर्जे का मुनाना इत्यादि । साधारणतः प्रांतीय बैंकों की शाखाएँ नहीं होती, किंतु यम्बई प्रांतीय बैंक न, उन क्षेत्रों में जहाँ स ट्रल बैंक नहीं हैं, अपनी शाखाएँ खोल दी हैं, जो उस क्षेत्र की प्राथमिक साख समितियों को श्रृंखला देती हैं ।

—०—

नवाँ परिच्छेद सहकारी भूमि-बन्धक बैंक

—०—

भूमि-बन्धक बैंकों की आवश्यकता—पहले बताया जा चुका है कि किसान को साधारण खेतीबारी के कारबार को चलाने के लिए छोटे समय और मध्यम समय के लिए श्रृंखला की आवश्यकता पड़ती है, इसके अतिरिक्त वह सभी श्रृंखला प्राप्त करता है, जो पशु, बीज, खाद, इलाक़ा तथा अन्य यंत्र खरीदने के लिये, लगान देने के लिये, तथा अपने कुटुम्ब के पालन के लिये लिया जाता है । इसके अतिरिक्त किसान को पुराने श्रृंखला चुकाने के लिये, भूमि की बचत कर देने और उसकी उपजाऊ बनाने के लिये, कृषि खोदने के लिये तथा कीमती यंत्र खरीदने के लिये अधिक समय के बचत भी श्रृंखला चाहिये ।

ग्राम्य सहकारी साख समितियाँ किसानों को छोटे समय और मध्यम समय के लिये श्रृंखला देती हैं । आरम्भ में जब सहकारिता आन्दोलन का भीष्मोत्थ हुआ था, लोगों की यह धारणा थी कि साख समितियाँ अधिक समय के लिये भी श्रृंखला दे सकेंगी, साख समितियों ने अधिक समय के लिए श्रृंखला दिया भी । किन्तु न तो साख समितियों के पास इतनी पूँजी थी कि वे सदस्यों के पुराने श्रृंखला चुका सकें और न ऐसा करना उनके हित में ठीक ही था । इस लिए साख समितियों ने अधिक समय के लिए श्रृंखला देना बन्द कर दिया । अधिकतर प्रांतीय बैंकिंग

इनकायरी कमेटियों का यह सम्मति है कि स्थिर सम्पत्ति को बचक रख कर अधिक समय क लिये श्रुण दना ग्रामीण सान्ध समितियों क लिए ठीक नहीं है। एक तो सान्ध समितियों क, स्थिर सम्पत्ति की जमानत पर, श्रुण दन में व्यक्तिगत सान्ध का महत्व नबल जान की सम्भावना है, जो सङ्कारिता क सिद्धांतों क विरुद्ध है। दूसरे, सेन्ट्रल बैङ्क तथा ग्रामीण सान्ध समितियों में हिवाजट याड़े समय क लिये हाता है, और याड़े समय क लिये जमा किये हुए रुपये स अधिक समय क लिए श्रुण दना जोखिम से लाला नहीं है। यह बैंकिंग क सिद्धांत क भी विरुद्ध है। तीसर, अधिक समय क लिये श्रुण दन में सम्पत्ति की जमानत तत समय उनक मूल्य को आकन तथा उनक स्वामित्व क विषय में जीव करन क लिये अनुमती कायकताओं और कमचारियों का आवश्यकता हाता है, जो ग्रामीण समितियों क पास नहीं होत। इसक अनिरुक्त एक कठिनाई यह भी है कि भूमि बचक रखन पर उनक सदस्य क कागज ग्रामीण समितियों के पास रखन में जोखिम है, और, नबमे बड़ा कठिनाई यह है कि सदस्यों के श्रुण न चुकान पर समिति की पूँजा कँस जावेगी और समिति की सदस्य के विरुद्ध डिगरी करा कर उस भूमि को नीलाम करवाना होगा। यह नब कानूना समिति मफलता पूर्वक नहीं कर सकती।

प्रान्तीय बैंकिङ्ग इनकायरी कमेटियों की रिपोर्टों से स्पष्ट है कि प्रान्तीय सहकारी बैङ्क सेन्ट्रल बैंक, तथा सान्ध समितियाँ किमान के पुरान श्रुण चुकाने में, या भूमि बचक रख कर दोष धान के लिए श्रुण दन में, असमय है। सेन्ट्रल बैङ्किङ्ग इनकायरी कमेटी क सामने गवाही दत हुए प्रान्तीय बैङ्कों क प्रतिनिधियों न भा यही सम्मति दी थी। सेन्ट्रल बैङ्किङ्ग इनकायरी कमेटी का भी यही मत है। इस रिग्रव बैङ्क न भा इस बात पर बहुत जोर दिया कि सहकारी सान्ध समितियाँ, सेन्ट्रल बैंक तथा प्रान्तीय बैङ्क याड़े समय क लिए श्रुण दें। इस कारण

अब साव्य समितियाँ लम्बे समय के लिए श्रृणु बिलकुल नहीं देती। इसके लिये भूमि व धन बैंक अधिक उपयुक्त हैं।

भूमि व धन बैंक के भेद—भूमि व धन बैंक दो प्रकार के होते हैं—(१) सहकारी, (२) गैर सहकारी (३) अथ सहकारी। भूमि व धन बैंक व सदस्य श्रृणु लेनवाले होते हैं, बैंक की अपनी पूँजी नहीं होती। जो भूमि व धन रख दी जाता है, उसका जमानत पर व धन बाड ('माटरोन बाड') देवे जान है और उनमें पूँजी प्राप्त की जाती है। यह बैंक लाभ को सदस्य करके काय नहीं करते, बल्कि सूद की दर घटाने का प्रयत्न करते हैं।

गैर सहकारी भूमि व धन बैंक मिश्रित पूँजी के होते हैं। जिस प्रकार अथ व्यापारिक बैंक लाभ की दृष्टि से स्थापित किये जाते हैं, वैसे ही यह बैंक भी सदस्यों की सम्पत्ति होने हैं और लाभ की दृष्टि से चलाये जाते हैं। किसान इत्यादि अपनी भूमि व धन रखकर उनसे श्रृणु लेते हैं। इस प्रकार व बैंक यूरोपीय देशों में सर्वत्र स्थापित किये गये हैं किन्तु राज्य उन पर नियन्त्रण रखता है, जिससे वे श्रृणु लेने वालों को तग न करे। अर्थात् सहकारी भूमि व धन बैंक वे हैं, जो न तो पूँजी रूप में सहकारी होते हैं, और न गैर सहकारी।

भारतवर्ष में बड़े जमींदारों के लिए गैर सहकारी, तथा किसानों के लिए सहकारी भूमि व धन बैंक उपयुक्त होंगे। किन्तु यहाँ जो भी भूमि व धन बैंक स्थापित किये गये हैं, वे अर्थात् सहकारी हैं, कोई भी पूँजी सहकारी नहीं कहा जा सकता। इस समय जो भी कार्य कर रहे हैं वे परिमित दायित्व वाली संस्थाएँ हैं, उनके सदस्य अधिकतर श्रृणु लेने वाले ही होते हैं। किन्तु कुछ सदस्य ऐसे भी ले लिये जाते हैं जो श्रृणु लेनेवाले नहीं होते। इन सदस्यों को बैंक के प्रबंध में सहायता पहुँचाने तथा पूँजी को आकर्षित करने व उद्देश्य से लिया जाता है। यह लोग प्रान्त व प्रसिद्ध व्यापारी होते हैं। इन सदस्यों की कमश

हटा देने की नीति है, जिसमें वैदिक पूर्ण रूप से सहकारी संस्था बन जावे । किन्तु यह बात सब को स्वीकार करनी पड़ती है कि जिस प्रकार रैफोसन सहकारी समितियों में सदस्यों का समिति के कार्य से अनिष्ट सम्बन्ध होता है, वैसा इन बैंकों में नहीं होता ।

योजना—मन् १९२६ में रजिस्ट्रार सम्मेलन ने एक प्रस्ताव द्वारा भूमि-वचक बैंकों की एक योजना तैयार की थी वह इस प्रकार है—

बैंक के उद्देश्य—(१) किसानों की भूमि तथा मकानों को छुड़ाना, (२) खेता को भूमि तथा खेतीबारी के धंधे की उत्पत्ति करना तथा किसानों के मकानों को बनवाना, (३) पुराने ऋण को चुकाना, (४) भूमि स्वरीदने के लिये कृपा देना ।

भूमि-वचक बैंक का कार्यक्षेत्र छोटा होना चाहिए, किन्तु इतना छोटा भी न हो कि उसका ठीक प्रभाव न हो सके । यह नियम न बनाया जावे कि ऋण कवज मात्र समितियों को ही दिया जावेगा, हाँ, यदि ऋण लेनवाला सात्व समितियों का सदस्य हो तो उसने विषय में समिति का मत ले लिया जावे, किन्तु समिति पर उस ऋण का कोई उत्तरदायित्व न रहे ।

सदस्य को उसकी सम्पत्ति के मूल्य के आधे से अधिक ऋण न दिया जाय । प्रत्येक सदस्य बैंक का हिस्सा स्वरीदे, जिसमें बैंक के के पास अपनी निजी पूँजी हो जावे, उसकी जमानत पर बैंक को बाहर से पूँजी मिल सके । ऋण लेनेवाले के हिस्से का मूल्य, जिसना ऋण वह लेना चाहता है उसका बामर्वा हिस्सा होना चाहिए । प्रत्येक बैंक अपनी आर्थिक स्थिति को देखते हुए एक एक निश्चित कर ले, जिससे अधिक ऋण किसी भी सदस्य को न दिया जावे । प्रान्त के सब भूमि-वचक बैंक अपना एक मगठन करे और एक केन्द्रीय संस्था स्थापित की जावे । केवल केन्द्रीय संस्था ही डिपेंडर वेचे, पृथक् पृथक्

अब लाख समितियाँ लम्बे समय के लिए श्रृणु बिलकुल नहीं देती। इसका लिये भूमि व चक बैंक आवश्यक उपयुक्त हैं।

भूमि व चक बैंकों के भेद—भूमि व चक बैंक तीन प्रकार के होते हैं—(१) सहकारी, (२) गैर सहकारी (३) अर्ध सहकारी। भूमि व चक बैंक के सदस्य श्रृणु लेनेवाले होते हैं, बैंक की अपनी पूँजी नहीं होती। जो भूमि व चक रख दी जाती है, उसका जमानत पर बचक बाड ('माटगेज बाड') बेचे जाते हैं और उनसे पूँजी प्राप्त की जाती है। यह बैंक लाभ को लक्ष्य करके कार्य नहीं करते, बल्कि धूल की दर घटाने का प्रयत्न करते हैं।

गैर सहकारी भूमि व चक बैंक मिश्रित पूँजी के होते हैं। जिस प्रकार अर्ध व्यापारिक बैंक लाभ की दृष्टि से स्थापित किये जाते हैं, वैसे ही यह बैंक भी हिस्सेदारों की सम्पत्ति होते हैं और लाभ की दृष्टि से चलाये जाते हैं। किसान इत्यादि अपनी भूमि व चक रखकर उनसे श्रृणु लेते हैं। इस प्रकार के बैंक योरोपीय देशों में सबसे स्थापित किये गये हैं किन्तु राज्य उन पर नियन्त्रण रखता है, जिससे वे श्रृणु लेने वालों को तग न के। अर्ध सहकारी भूमि व चक बैंक वे हैं, जो न तो पूण रूप से सहकारी होते हैं, और न गैर सहकारी।

भारतवर्ष में बड़े जमींदारों के लिए गैर सहकारी तथा किसानों के लिए सहकारी भूमि व चक बैंक उपयुक्त होते। किन्तु यहाँ जो भी भूमि व चक बैंक स्थापित किये गये हैं, वे अर्ध सहकारी हैं, कोई भी पूण सहकारी नहीं कहा जा सकता। इस समय जो भी कार्य कर रहे हैं वे परिमित दायित्व वाली संस्थाएँ हैं, उनके सदस्य अधिकतर श्रृणु लेनेवाले ही होते हैं। किन्तु कुछ सदस्य ऐसे भी ले लिये जाते हैं जो श्रृणु लेनेवाले नहीं होते। इन सदस्यों को बैंक के प्रबंध में सहायता पहुँचाने तथा पूँजी को आकर्षित करने व उन्हें देख से लिया जाता है। यह लोग प्रातः के प्रसिद्ध व्यापारी होते हैं। इन सदस्यों को कर्मचारी

हटा देने की नीति है, जिसने ठीक पूर्ण रूप से सहकारी सस्था बन जावे।
किंतु यह बात सब को स्वीकार करनी पड़ती है कि जिस प्रकार रैसासन
सहकारी समितियों में सदस्यों का समिति के कार्य से अनिष्ट सम्बन्ध होता
है, वैसा इन बैंकों में नहीं होता।

योजना—मन् १९२६ में रजिस्ट्रार सम्मेलन ने एक प्रस्ताव द्वारा
मूँमि बचक बैंकों की एक योजना तैयार की थी वह इस प्रकार
है—

बैंक के उद्देश्य—(१) किसानों का मूँमि तथा मकानों को
छुड़ाना, (२) नेता की मूँमि तथा लेनीवारी के बच की उत्पत्ति
करना तथा किसानों के मकानों को बनवाना, (३) पुराने ऋण को
बुकाना, (४) मूँमि स्वीकृति के लिये रूपया देना।
मूँमि-बचक बैंक का कार्यक्षेत्र छोटा होना चाहिए, किंतु इतना
छोटा भी न हो कि उसका ठीक प्रबन्ध न हो सक। यह नियम न
बनाया जावे कि ऋण केवल मात्र समितियों को ही दिया जावगा, हाँ,
याद ऋण लेनवाला मात्र समितियों का सदस्य हो तो उसका विषय में
समिति का मत ल लिया जाव, किंतु समिति पर उस ऋण का
कोई उत्तरदायित्व न रहे।

सदस्य को उसकी सम्पत्ति के मूल्य के आधे में अधिक ऋण न
दिया जाय। प्रत्येक सदस्य बैंक का हिस्सा स्वामी, जिसमें बैंक के
के पास अपनी निजी पूँजी हो जावे, उसकी जमानत पर बैंक को
बाहर से पूँजी मिल सके। ऋण लेनवाले के हिस्से का मूल्य, जिसका
ऋण वह लेना चाहता है उसका बागवॉ हिस्सा होना चाहिए। प्रत्येक
बैंक अपनी आर्थिक स्थिति को देखते हुए एक रकम निर्दिष्ट कर ले
जिससे अधिक ऋण किमा भी सदस्य को न दिया जाव। प्रान्त के सब
मूँमि-बचक बैंक अपना एक मण्डल करे और एक उद्देश्य सस्था
स्थापित की जावे। केवल केन्द्रीय सस्था ही निवेष्टक बचे, पृथक् पृथक्

बंधक बैंक को यह अधिकार न दिया जावे तो प्रांतीय सहकारी बैंक यह कार्य करे अथवा इसके लिए कोई पृथक् सेट्रल भूमि बंधक बैंक स्थापित किया जावे ?

(४) क्या भूमि बंधक बैंक साधारण बैंको तथा सरकारी सेट्रल बैंको की भांति डिपॉजिट लें ? यदि लें तो उससे लिए क्या शर्तें होनी चाहिये ?

(५) जहां सहकारी साख्त समिति तथा भूमि-बंधक बैंक एक ही स्थान पर हो, वहां उनका क्या सम्बन्ध होना चाहिए ?

(६) क्या सरकार इन बैंको को आर्थिक सहायता दे ? यदि दे तो किस प्रकार दे—बैङ्को को श्रृंखला देकर, बैङ्को को टैक्स तथा फास से मुक्त करके, डिपेंडेंसरी के मूल तथा सुद की गारंटी देकर, उनको ट्रस्टी सिन्डिकेरीटी बनाकर अथवा डिपेंडेंसरी खरीद कर ?

(७) क्या एक विशेष कानून बनाकर इन बैङ्को को यह अधिकार देना चाहिये कि बिना अदालत में गये हुए बंधक रखी हुई भूमि को बेच दें ?

सेट्रल बैंकिंग इनकायरी कमेटी की यह सम्मति तो हम पहले ही लिख चुके हैं कि बड़े बड़े ज़मींदारों के लिये मिश्रित पूँजीवाला व्यापारिक भूमि बंधक बैंक स्थापित किये जाय और किसानों के लिये सहकारी भूमि बंधक बैंक । ऊपर लिखे अर्थ प्रश्नों पर कमेटी का सम्मत नोट लिखा जाती है—

कमेटी की राय में निम्नलिखित कार्यों के लिए श्रृंखला देना चाहिए—(क) किसान की भूमि और मकान को छुड़ाने के लिए तथा पुनर्गठन के लिये, (ख) भूमि तथा खेतोंवारी के दफ्तर मुधारन के लिये तथा किसानों के मकान बनवाने के लिए । (ग) विशेष अवस्थाओं में भूमि खरीदने के लिये ।

श्रृंखला कितना दिया जावे, और कितने समय के लिये यह श्रृंखला देनेवाले

की क्षमता तथा जिस कार्य के लिए श्रृण लिया जा रहा है, उस पर निर्भर होगा। रुपया पाँच बरष से लेकर बीस बरष के निये दिया जावे। आगे चलकर तास बरष के लिये भा रुपया दिया जा सकता है। कमेटी की सम्मति में ५००० रु० से अधिक एक सदस्य को न दिया जावे, सदस्य की भूमि का आधे से अधिक श्रृण किसी भा दशा में न दिया जावे।

कमेटी की राय में श्रृण सूद सहित बराबर बराबर किस्तों में अदा किया जावे, जिससे कि एक निश्चित समय पर श्रृण चुक जावे, इससे यह लाभ होता कि किसान को लगभग उतनी ही किस्त देनी होगी, जितनी वह महाजन को बवल सूद में देता है। किन्तु बैंकों का यह अधिकार न दिया जावे कि यदि वे चाहें तो दूसरे दग से किस्तें वसूल कर सकते हैं।

भूमि-व चक बैजों की कायशील पूँजी हिस्सा पूँजी तथा डिबेजरी से प्राप्त की जानी चाहिये। हिस्सा पूँजा दो प्रकार से प्राप्त की जा सकती है—एक तो आरम्भ में हिस्सा बेच कर, दूसरे श्रृण जत समय की हुई रकम में स पाँच प्रातद्यत काट कर हिस्से का मूल्य वसूल क न से। कि दु आरम्भ में काम चलाने के लिये जहाँ कहीं भी आवश्यकता हो प्रातीय सरकार बैंकों को बिना सूद के रुपया दे दे और डिबेजरी बिक्री पर जा रुपया आये, उसमें से सरकार को रुपया दे दिया जावे। ध्यान रहे कि पूँजा की यह व्यवस्था बैंकों के प्रारम्भिक काल में ही उपयुक्त होगी। विशेषज्ञों का कथन है कि आगे चलकर इन बैंकों को बहुत पूँजी की आवश्यकता होगी, उस समय प्रातीय सरकारों को इन बैंकों के हिस्से खरीद कर इनको सहायता पहुँचानी चाहिये।

अधिकतर कायशील पूँजा डिबेजरी के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। सेंट्रल बैंकिंग इनकायरी कमेटी के सामने गवाहा देते हुए कुछ विदेशी विशेषज्ञों ने कहा था कि बैंकों की जितनी हिस्सा पूँजी हो उससे

एक दूध सहकारी समिति की स्थापना की। आरम्भ में गाव वाले तैयार नहीं हुए, किन्तु पीछे एक गाव के किसान, जिनका ग्वाले से झगड़ा हो चुका था और जो इस चिन्ता में थे कि वे अपना दूध कलकत्ते में किस प्रकार बेचें, तैयार हो गये। इस तरह पहली समिति की स्थापना हो गई।

समिति ने किसानों को ग्वाले से एक रुपया की मन अधिक मूल्य दिया और उनके हिसाब की पामबुक हर किसान को दे दी। समिति भी दुहनवालों को नौकर रखती थी। आरम्भ में समिति को बहुत थोड़ा लाभ हुआ, किन्तु समिति ने दो बातों से सफलता प्राप्त की, एक तो किसानों को दूध की क्रोमत अधिक दी, दूसरे ग्राहकों को शुद्ध दूध दिया। क्रमशः समितियों की संख्या बढ़ने लगी। समितियों के सदस्यों को दूध का अधिक मूल्य मिलते देख, ग्राम गावों में भी किसान समितियों के सदस्य बनने को लालायित होने लगे और कलकत्ते में समिति के दूध की माग बढ़ने लगी। सन् १९१६ में समितियों ने एक दूध सहकारी यूनियन संगठित की, तबसे समितियों की संख्या बढ़ी तेजी से बढ़ती गई। सन् १९४४ में १२६ दूध समितियाँ यूनियन से सम्बंधित थी जिनके लगभग ६५०० सदस्य थे। केवल कलकत्ते में ही यूनियन लगभग १५० मन दूध प्रति दिन बेचती थी, जिसका मूल्य वर्ष में चार लाख रुपये से अधिक होता था।

दूध की उत्पत्ति का केन्द्र ग्राम्य दूध समितियाँ हैं। ये समितियाँ ही यूनियन की सदस्य हो सकती हैं। दूध-यूनियन इन समितियों को पूँजी देती है, उनका निरीक्षण तथा नियन्त्रण करता है, और कलकत्ते में दूध बेचती है।

समितियों के प्रतिनिधि यूनियन के डायरेक्टरों का चुनाव करते हैं। प्रत्येक समिति की एक वाट होती है। केवल समापति और उपसमापति नहीं चुन जात। डायरेक्टर ही यूनियन के कार्य को देखभाल

करते हैं।

यूनियन न कुछ भण्डार स्थापित किये हैं, जिनमें कर्मचारी नियुक्त किये गये हैं। भण्डार पर समितियों का दूध निया जाता है। जिन समितियों के समीप कोई भण्डार नहीं है, वे समापवर्ती रेलवे स्टेशन पर दूध भेज देती हैं। भण्डारों के मेनजर रेलवे के द्वारा दूध कनकत्ते भेज देते हैं। कनकत्ते में यूनियन का एक कमचारी दूध ले जाता है तथा प्राइकों के यहाँ भेज दिया जाता है।

भण्डार में जब दूध आता है तो भण्डार का मेनजर यत्र से उसकी जाँच करता है तथा शुद्ध बर्तनों में भरे हुए दूध को कनकत्ते भेजता है। यूनियन एक पशु चिकित्सक रखती है जो समितियों के पशुओं की जाँच करता है और उनके रहने के स्थानों की देखता है कि वे गन्दे तो नहीं हैं। इन सब कमचारियों के ऊपर एक सरकारी कमचारी है, जो यूनियन का चेयरमेन है। सरकार ने इस कमचारी का सवाई मह-कारिता विभाग का दफ्तर है। दूध की वैज्ञानिक दृष्टि से सुरक्षित तथा शुद्ध रखने के लिये यूनियन ने एक फ्रिजरी स्थापित की है। यूनियन मोटर, बैलगाड़ी, तथा ठेकों के द्वारा प्राइकों के पास दूध पहुँचाती है, और अपने कमचारियों तथा एजेंटों के द्वारा दूध बेचती है।

आरम्भ में यूनियन के पास बहुत याड़ा पूँजी थी, किन्तु अब यूनियन की कार्यशाला पूँजी एक लाख और निधी पूँजी अस्सी हजार रुपये से कुछ अधिक है। यूनियन का वार्षिक लाभ लगभग २०,००० रु० है। यूनियन ने बहुत से प्रायमरी स्कूल खोले हैं, जिससे सहकारी समितियों के सदस्यों के लड़के शिक्षा पा सकें। यूनियन ने गाँवों में कुछ भी खुदवाये हैं, तथा बढिया साइड खरीद कर रखे हैं, जिससे सदस्यों के पशुओं का आति अच्छी बन। बंगाल में कनकत्ते के अतिरिक्त दादा, दाजानग, तथा अन्य स्थानों में भी सहकारी समितियाँ स्थापन हो गई हैं, जिनकी संख्या दो सौ से कुछ अधिक है। शान्त में यह

आंदोलन अत्यन्त सकल हुआ है, और भविष्य में अधिकाधिक उन्नति की आशा है।

कलकत्ते की भाँति मदरास में भी दूध सहकारी समितियाँ स्थापित की गई हैं।

सयुक्तप्रान्त में लखनऊ और इलाहाबाद की सहकारी दूध यूनियन वष में कुल मिलाकर २०,००० मन दूध लगभग २॥ लाख रुपये का बेच लेती हैं और अपने पान के गाँवों में, अपने सदस्यों को, प्रतिवर्ष २ लाख रुपये के लगभग दूध के मूल्य के रूप में, बाँटती हैं। लखनऊ यूनियन प्रति दिन ५० मन दूध और प्रयाग की यूनियन ३० मन दूध बेचती हैं। सयुक्तप्रान्त में लखनऊ और इलाहाबाद दूध यूनियनों को मिला कर ४५ दूध समितियाँ हैं। लखनऊ की समितियों के सदस्य अपनी गाँवों का दूध पशुओं के सामने दुहते हैं, और उन बर्तनों को, जिनमें भरकर दूध लखनऊ भेजा जाता है, वहीं ठाला लगा दिया जाता है। समितियों से दूध उन भण्डारों पर ले जाया जाता है, जहाँ वह इकट्ठा होता है वहाँ दूध की परीक्षा होती है। फिर उसे गरम किया जाता है। गरम दूध बड़े बड़े बर्तनों में भर कर उन पर मुहर लगा दी जाती है और मोटर-लारी द्वारा उन्हें लखनऊ भेज दिया जाता है। लखनऊ यूनियन में पहुँचने पर दूध जाँचा जाता है, फिर उसे ठंडा किया जाता है और शीतमंभार ('कोल्ड स्टोरेज') में रखा जाता है। पाँछे उस बर्तनों में बन्द करके ग्राहकों के पास भेज दिया जाता है। यह यूनियन आर्थिक दृष्टि से बहुत सकल हुआ है। सयुक्तप्रान्त में उन्नाव और बनारस में भी एक एक दूध समिति स्थापित हुई है।

आसाम में भी कुछ दूध समितियाँ स्थापित की गई हैं, किन्तु वहाँ कुछ की छोड़ कर शेष असफल रही।

पंजाब में कुछ ऐसी समितियाँ स्थापित की गई हैं, जो प्रति सप्ताह अपने सदस्यों की गाँवों का दूध नापती हैं, और उसका लेखा रखती

है। समिति का निरीक्षण सदस्यों को बतलाता है कि किस गाय का रखना व्यापारिक दृष्टि से लाभदायक है और किस गाय का हानिकारक। जब तक भारतवर्ष में दूध का घधा उन्नत नहीं हो जाता, यह आशा करना कि इन प्रकार की समितियाँ अधिक स्थापित होंगी, स्वप्न मात्र है।

घी समितियाँ—सयुक्तप्रांत में घी का घधा बहुत महत्वपूर्ण है। यह घधा व्यापारियों के हाथ में है, जो प्रायः किसानों को घी का कम मूल्य देकर उसमें चर्बी, या तल, वनस्पति घी मिला कर ऊँचे दामों पर ग्राहकों को बेचते हैं। अतएव ग्राहकों को शुद्ध घी देने और किसानों को अच्छा मूल्य दिलाने के लिए सहकारी घी समितियाँ स्थापित की गयी हैं। इस समय प्रांत में आगरा, एटा, बारा, जालौन, मैनपुरी, इटावा, मेरठ, बुलंदशहर इत्यादि जिलों में आठ से सत्तर घी समितियाँ हैं, जो १२ घी विक्रय यूनियनों से सम्बंधित हैं। इन समितियों के दस हजार से ऊपर सदस्य हैं और लाखों रुपये का घी बेचा जाता है।

एक गाँव में एक घी समिति स्थापित की जाती है, जिस किसान के पास गाय या भैंस होती है, वह उसका सदस्य बन सकता है। जब गाय भैंस ब्याती है, तभी समिति उससे एक निश्चित राशि में घी के लिये बादा करा लेती है। समिति उस घी का रूपया किसान को पेशगी दे देती है। प्रति पखवाड़ा घी पञ्चायत के सामने, गरम किया जाता है और तोना जाता है। केवल शुद्ध घी ही लिया जाता है और उस सदस्य के हिसाब में जमा कर दिया जाता है। प्रत्येक जिले में एक घी यूनियन है, जो घी को इकट्ठा करके बाहर भेजती है।

बारहवाँ परिच्छेद चकबन्दी समितियाँ

रोतों का छोटे और बिलखे हुए होना—भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है, लगभग ७० प्रतिशत जनता खेतीबारी में लगी हुई है। यह उद्योग घघो क नष्ट हो जाने का कारण उनमें लगी हुई जनता भी खेतीबारी में घुस गई, साथ ही बढ़ती हुई जनसंख्या का भरण-पोषण का लिये भी खेती का अतिरिक्त और कोई साधन नहीं रहा। इन सब कारणों से खेती में लगी हुई जनसंख्या बराबर बढ़ती गई। फल यह हुआ कि प्रति किसान भूमि कम होती गई। यम्बह, पञ्जाब तथा घ य प्रा तो में तो कहीं कहीं खेत बबल तीन या चार बग गज के रह गये हैं। देश में खेतीबारी के योग्य जितनी भूमि थी, यह सब जोत ली गई यहाँ तक कि चरागाह भी खेतों में परिवर्तित कर दिये गये, फिर भी भूमि की कमी रही।

किसानों का पास भूमि थोड़ी तो है ही, साथ ही वह छोटे छोटे टुकड़ों में विभाजित है, और ये टुकड़े एक-दूसरे के पास न होकर बिलखे हुए हैं। खेतों के बिलखे हुए होने से किसान का समय, परिभ्रम तथा पूँजी का इतना अधिक अपव्यय होता है कि वैज्ञानिक ढंग से खेती की उन्नति नहीं हो सकेगी।

खेती का बिलखने का कारण यह है कि भारतवर्ष में हिन्दू व मुसलमानों में यह रीति है कि बाप के मरने पर भूमि बराबर बराबर सब लड़कों में बाँट दा जावे। फल यह होता है कि प्रत्येक चढ़का या के ॥ एक सत में से बराबर हिस्सा लेना चाहता है। मिसाल के तो पर यदि किसान का पास चार भूमि के टुकड़े हैं और उसके चार बेटे हैं

ता चारो बेटे प्रत्येक टुकड़े में से एक-चौथाई हिस्सा लेंगे। बात यह है कि प्रत्येक टुकड़े को उत्पादन शक्ति भिन्न भिन्न होती है, इसलिए अच्छी तथा बुरी सारी ही भूमि क बराबर टुकड़े करके बाँट दिये जायेंगे। फल यह होगा कि ये चार टुकड़े सोलह टुकड़ों में विभाजित हो जावेंगे। क्रमशः खेत बँटते बँटते एक दूसरे न दूर पड़ जाते हैं और ज़ेफ़नज में बहुत छूटे हो जाते हैं।

बिल्वरे हुये खेतों का खेतीबारी पर बहुत बुरा प्रभाव होता है। कुछ खेत तो इतने छोटे हो जाते हैं कि उन पर खेता बारी हा हा नहीं सकता, वह भूमि बेकार पड़ी रहता है। फिर, बहुत सा भूमि खेतों की मेढ़ों में नष्ट हो जाती है। किसान का एक खेत से दूसरे खेत पर जान में बहुत समय खर्च करना पड़ता है। वह न तो उन बिल्वरे हुए खेतों की ठीक तरह से देखभाल ही कर सकता है और न वैज्ञानिक ढंग से खेती ही कर सकता है। यदि किसान क सब खेत एक ही स्थान पर हो तो वह एक कुर्छा खोद कर सिंचाई कर सकता है, किन्तु प्रत्येक बिल्वरे हुए खेतों की रन्वबारी भी नहीं कर सकता। छोटे छोटे खेतों की मेढ़ों के कारण किसानों में आपस में झगड़ा होता है, इस प्रकार खेतों के बिल्वरे हुए होने का दया खेताबागी की उन्नति नहीं हो सकती। जब तक हिन्दू तथा मुस्लिम कानूनों में परिवर्तन न किया जावे, जब तक यह समस्या हल नहीं हो सकती। बम्बई प्रान्त में दो बार इस बात का प्रयत्न किया गया, किन्तु दोनों बार वह असफल रहा। हाँ, बड़ोदा राज्य में एक ऐसा कानून अवश्य बना दिया गया है, जिसमें कोई खेत एक निश्चित सीमा क बाद बाँटा नहीं जा सकता।

पञ्जाब में चक्रवर्ती—भारतवर्ष में सब प्रथम पंजाब में सहकारिता क द्वारा खेतों को चक्रवर्ती का काम प्रारम्भ किया गया, और वहाँ आराजनक सफलता प्राप्त हुई। १९२० में वहाँभूमि की चक्रवर्ती करने

वाली समितियाँ इस उद्देश से स्थापित की गई कि छोटे बिल्वे हुए खेतों को इस प्रकार बाटा जाय कि किसानों को अपनी सारी भूमि के बराबर एक ही स्थान पर, अथवा दो या तीन बड़े टुकड़ों में, भूमि मिल जावे। पंजाब प्रांतीय सहकारिता विभाग ने इस कार्य के लिये रेवेन्यू विभाग के कर्मचारियों को नियुक्त किया। वहाँ सब-इन्स्पेक्टर गाँवों में जाकर किसानों को बिल्वे हुए खेतों से होने वाली हानियाँ, चकबंदी के लाभ और चकबन्दी करने के उपाय समझाता है। जब किसान चकबंदी समिति के सदस्य बनने को तैयार हो जाते हैं तो समिति को स्थापना की जाती है, और एक पञ्चायत चुन ली जाती है। समिति का सदस्य या तो ज़मींदार हो सकता है, अथवा मौरूसी किसान।

समिति की सदस्यों की निम्नलिखित बातें स्वीकार करनी पड़ती हैं (१) चकबन्दी के लिए बिल्वे हुए खेतों का नया बंटवारा आवश्यक है। (२) यदि किसी योजना को दो विहाई सदस्य स्वीकार कर लेंगे तो वह योजना प्रत्येक सदस्य को स्वीकार करनी होगी। (३) स्वीकृत योजना के अनुसार वह अपने खेतों को सदा के लिए छोड़ देगा। (४) यदि किसी प्रकार का झगड़ा उपस्थित हो जाय तो पंच नियुक्त किये जावेंगे और जो फैसला वे देंगे, वह सबको मान्य होगा। यद्यपि समिति के नियमों के अनुसार दो विहाई सदस्यों से स्वीकृत योजना हुए एक सदस्य को मान्य होगी, किंतु यह नियम अभी काम में नहीं लाया जाता, और जब तक सब सदस्य अपने टुकड़ों को दे कर नये खेत लाना स्वीकार नहीं कर लेते तब तक योजना सफल नहीं होती।

सब-इन्स्पेक्टर, गाँव में कितन प्रकार की जमीन है, यह निश्चित करता है, और नवीन बंटवारे में इसका ध्यान रखा जाता है। बंद्योड़ी की भूमि सावधानिक उपयोग के लिये सुरक्षित रखता है, जैसे सड़क इत्यादि। कृषि तथा सिंचाई के अन्य साधनों में किसानों का हिस्सा निर्धारित

किया जाता है। जब यह सब निश्चय हो जाता है तो पचायत कम चारी की सहायता से एक नकशा तैयार करती है, जिसमें नवान बँटवारा दिखाया जाता है। यह नकशा साधारण सभा के धामन रखा जाता है। यदि सब सदस्य उसको स्वीकार कर लेते हैं तो वह लागू होता है, नहीं तो फिर से नया बँटवारा हाता है और नया नकशा तैयार किया जाता है। इस प्रकार कभी कभी नकश तीन-चार बार तैयार कान पड़ते हैं और महोनों का पराभिन्न बनन एक किसान के हठ में नष्ट हो जाता है। जब नया बँटवारे को सब लोग स्वीकार कर लेते हैं, तब उन्हें नये खेत दे दिये जाते हैं और उन खेतों की रजिस्ट्री करा दी जाती है।

इस यात्रा में किसानों का हानि नहीं होती, कृषकों का भी पहिल से कम भूमि नहीं मिलती। काहें जबरदस्ती नहीं की जाती, और छोटे तथा बड़े सभी किसान इससे लाभ उठा सकते हैं। चक्रवादी समितियाँ इन बिलर हुए खेतों की कवज चक्रवन्दी करता है, भूमि का लड़कों में बटना नहीं रोक सकते।

पंजाब में चक्रवन्दी का कार्य आरम्भ होने पर पहले आठ वर्षों में केवल १,६२,००० एकड़ भूमिका चक्रवन्दी हुई, किन्तु सन् १९२६ में ४८,०७६ एकड़ की, १९३० में ५०,००० एकड़ से अधिक की, और १९३१ में ७२,८२१ एकड़ भूमि की चक्रवन्दी हुई। १९३५ तक चक्रवन्दी का गति कुछ धीमा रहा क्योंकि वह समय आर्थिक मंदी का था। १९२५ के उपरान्त चक्रवन्दी बहुत तेजी से चला। अब प्रतिवर्ष डेढ़ लाख एकड़ भूमि का चक्रवन्दी हो रहा है। अब तक पास लाख एकड़ से अधिक भूमि की चक्रवन्दी हो चुकी है और प्रति एकड़ पाँचे दो रुपये से कम खर्च हाता है। चक्रवन्दी के दिन स्वयं उन गांवों में ३००० नये कुएँ और १० नालें खोदी गईं, १००० से अधिक दूधों का मरम्मत की गई और वे बिचाई के योग्य बनाये गये।

पञ्जाब में चकबन्दी कानून सन् १९३६ में पास किया गया। वहाँ रेवन्यू विभाग को चकबन्दी के काम में अच्छी सफलता मिली है। जिन गाँवों में चकबन्दी हो चुकी है, वहाँ कृषि अधिक सन्ध्या में खोदे गये हैं, तथा जो भूमि पहिले जोती नहीं जाती थी, उस पर खेतीबारी होन लगी है। साथ ही उन गाँवों में खेतीबारी की विशेष उन्नति हुई है। खेतों के बिल्हरे होने से जो हानियाँ थीं, कमश दूर हो रही हैं। गाँवों में एक प्रकार से नया जीवन आ गया है। यही नहीं, कहीं-कहीं किसानों ने अपने खेत पर ही मकान बना कर रहना प्रारम्भ कर दिया है।

किन्तु इस प्रकार चकबन्दी करने में बहुत सी कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। जिस योजना में प्रत्येक किसान की राज़ी करना आवश्यक हो, उसका सफल होना सदैवजनक ही होता है। प्रत्येक भूमि का स्वामी अपनी पैतृक भूमि को अच्छा समझता है, पुराने विचारों के बुद्धे किसान कोई परिवर्तन नहीं चाहते छोटे किसानों को चकबन्दी में अधिक लाभ नहीं दिखाइ देता, क्योंकि उनके पास एक या दो ही खेत हैं, तथा मोरुसी काश्तकार समझता है कि यदि उसने अपनी भूमि को बदल लिया तो उसके अधिकार जाते रहेंगे। यह कठिनाइयाँ तो हैं ही, गाँव का पटवारी भी चकबन्दी नहीं चाहता। वह समझता है कि चकबन्दी हो जाने से उसकी आमदनी कम हो जावेगी। अस्तु, इस कार्य के करनेवालों को अत्यन्त धैर्य तथा सहानुभूति से काम करना चाहिए।

जब किसी किसान के हठ से योजना असफल होती दिखाइ दे तो उस किसान की भूमि को छोड़ देने से काम चल सकता है। परन्तु ऐसे बहुत से उदाहरण हैं, जिनमें बहुत समय तथा रुपया खर्च करके योजना तैयार करने पर भी कतिपय किसानों के राज़ी न होने से सब किया घरा व्यर्थ होगया। सन् १९२८ में यह नियम बनाया

गया कि यदि ६० प्रतिशत सदस्य किसी योजना को स्वीकार करे तो उस योजना को लागू किया जावे।

कुछ विद्वानों का कथन है कि बिना कानून बनाये चक्रवन्दी का काय सफलता-पूर्वक नहीं किया जा सकता। कुछ लोगों का तो यहाँ तक कहना है कि सहकारिता आन्दोलन इस कार्य के लिए उपयुक्त नहीं है, इसलिये कानून के द्वारा चक्रवन्दी होना चाहिए। किन्तु यह सब मानते हैं कि सहकारिता के इतने अधिक लाभ हैं कि जब तक इसका द्वारा सफलता मिल रही है तब तक इसको न छोड़ना चाहिए। जहाँ जहाँ चक्रवन्दी का काय सफलता-पूर्वक हो चुका है, वहाँ जनता इसका लाभों को समझ गई है, और लोगों को राय कानून बनाने के पक्ष में है। परन्तु अभी वह समय नहीं आया, जब कानून के द्वारा चक्रवन्दी का काय किया जावे, क्योंकि यदि कोई ऐसा कानून बनाया गया तो यह काय रेवन्यू विभाग के कर्मचारी करेंगे, फल यह होगा कि जनता का विश्वास हट जावेगा और बड़ी कठिनाईयाँ उत्पन्न होनी होंगी।

१९२८ में रजिस्ट्रार सम्मेलन ने इस आशय का प्रस्ताव पास किया था कि जहाँ तक स्थानीय परिस्थिति सहकारिता समितियों के द्वारा चक्रवन्दी के लिये अनुकूल हो वहाँ तक समितियाँ यह काय करें।

मध्यप्रान्त में—मध्यप्रान्त की छत्तीसगढ़ कमिश्नरी में खेत बहुत छोटे तथा बिल्हरे हुए हैं। प्रान्तीय सरकार ने कहा कि इस समस्या का हल करन का विचार किया। रेवन्यू तथा बन्दोबस्त विभाग के कर्मचारियों ने चक्रवन्दी करन का प्रयत्न भी किया किन्तु सफलता न मिली। ज़मींदारों तथा मालगुज़ारों ने भी चक्रवन्दी का प्रयत्न किया, किन्तु किसानों ने इस कार्य से सहयोग नहीं किया, क्योंकि मालगुज़ार यह प्रयत्न करते थे कि अच्छी भूमि उठे मिल जावे। इस कमिश्नरी में एक तो भूमि बहुत प्रकार की है दूसरे कानूना अड़चने भी हैं। इस

कारण प्रांतीय सरकार ने सन् १९१८ में चकबन्दी कानून बनाया, जो अभी केवल छत्तीसगढ़ कमिश्नरी में ही लागू है।

इस कानून के अनुसार दो या अधिक गाँवों की भूमि के स्वामी, अथवा स्थाई रूप से जोतनेवाले, चकबन्दी के लिए प्रार्थनापत्र दे सकते हैं। किंतु यह यह है कि उनका पास गाँव की भूमि का एक निश्चित भाग होना चाहिए। गाँव के कम से कम आधे भूमि जोतनेवाले जिनके पास गाँव की दो तिहाई भूमि हो, यदि चकबन्दी की योजना को मान लें और अधिकारियों से उसकी स्वीकृति मिल जावे तो वह योजना अन्य लोगों पर लागू हो जावेगी। इस कार्य को करने के लिये एक अफसर रहता है। उसे उच्च अधिकारियों में योजना की स्वीकृति लेनी पड़ती है। यदि उस योजना में किसी को कुछ भी आपत्ति हो तो डिप्टी कमिश्नर अथवा मैजिस्ट्रेट अफसर स्वीकृति दे सकता है, नहीं तो सेंट्रल मैजिस्ट्रेट स्वीकृति देता है। उसकी कोई अपील नहीं हो सकती, केवल प्रांतीय सरकार इस मैजिस्ट्रेट को पलट सकती है।

मध्यप्रान्त में चकबन्दी कानून के द्वारा बहुत कुछ काम हुआ है। सन् १९३६ तक १९८५ गाँवों में चकबन्दी हुई और ३१ करोड़ ४० लाख भूमि के टुकड़ों को घटाकर उ है केवल पाँच लाख सत्तर हजार कर दिया गया। प्रांत का अधिकांश भूमि की चकबन्दी हो रही है। चकबन्दी रेवेन्यू विभाग करता है।

समुक्तप्रान्त में—समुक्तप्रांत में २६१ सरकारी भूमि चकबन्दी समितिर्वा स्थापित हो चुकी है। ये समितियाँ पञ्जाब की समितियों की ही आदश मानकर कार्य कर रही हैं। किंतु यहाँ कठिनाइयाँ अधिक हैं। एक तो यहाँ गाँवों में भूमि बहुत प्रकार की होती है लूरे जमींदार तथा किसान भी बहुत प्रकार के हैं, उनके अधिकारों में बहुत भिन्नता है। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि यह आन्दोलन कहाँ तक सफल होगा। फिर भी लगभग एक लाख बीघा भूमि की चकबन्दी हो

सुकी है, और १ लाख खेत, ६ हजार खेतों में परिणत कर दिये गये हैं। १९३६ में चकबन्दी-कानून पास हो गया, तब से रेवन्यू विभाग भी यह काम कर रहा है।

कुछ समय से मद्रास प्रान्त में भी चकबन्दी समितियाँ स्थापित हो रही हैं। वहाँ प्रयोग अभी नया हो होने से उसका बाग में विशेष नहीं कहा जा सकता।

दोरी राज्यों में बड़ोदा तथा करमार में चकबन्दी समितियाँ सक्रियता पूर्वक काम कर रहा है, इन दोनों राज्यों में चकबन्दी का काम क्रमशः बढ़ता जा रहा है।

भारतवर्ष के प्रत्येक प्रांत तथा प्रांतीय राज्यों में बिखरे हुए छोट-छोटे खेतों की समस्या ने विकट रूप धारण कर रखा है। जगह-जगह इस पर विचार हो रहा है, किन्तु क्या उपाय काम में लाया जाय, इसका निश्चय नहीं हो पाया है। पत्राव न इस आंदोलन में पथ प्रदर्शक का कार्य किया है।



तेरहवीं परिच्छेद

सफाई तथा स्वास्थ्य समितियाँ

गाँवों की सफाई और स्वास्थ्य का प्रश्न—भारतवर्ष के गाँवों में गन्दगी का तो माना साम्राज्य है। बिबरं दलिये, उमर हा दूड़ा तथा गंदगी ७ देर दिखजाइ देंग। गाँव का गलियाँ कम्मे छार नही की जाती, परो के समीर हो अथवा कुछ हा दूरी पर, लाद के देर लगा दिये जात है, बिनसे गन्दगी तो बढता हा है, साथ ही न स्वर्ण हतनो अधिक उत्पन्न हो जाती है कि वे सारे गाँव में फैल जाता है। ये महिलायाँ गन्द पदार्थ पर बैठ कर अन्न परो तथा पैरो से गन्दगी को भोजन, वस्त्र, बत्त तथा बच्चा के चेहरे, तथा गुरुओं के मुँह, नाक तथा